आत्म कथन

धन्य बाबा !

आचार्य सत्यनारायण गोयन्का



आत्म कथन

धन्य बाबा!

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायणजी गोयन्का

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी

प्रथम संस्करण : २००२
द्वितीय संस्करण : २००५
पुनर्मुद्रण : २०१०

मूल्यः रु. ३५/-

ISBN: 978-81-7414-232-0

प्रकाशकः
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२ ४०३
जिला- नाशिक, महाराष्ट्र
फोनः ०२५५३-२४४०७६, २४४०८६, २४३७१२,
२४३२३८; फैक्सः ९१-२५५३-२४४१७६
Email: vri_admin@dhamma.net.in
info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org

मुद्रकः
अपोलो प्रिंटिंग प्रेस
जी-२५९, सीकॉफ लिमिटेड, ६९ एम. आय. डी. सी.,
सातपुर, नाशिक-४२२००७, महाराष्ट्र

विषय-सूची

प्राक्कथन

मैं सचमुच भाग्यशाली हूं। मेरा जन्म एक अत्यंत धर्मपरायण परिवार में हुआ। माता और पिता दोनों भक्तिमार्ग के श्रद्धालु पथिक थे। अतः प्रपत्तिपरक आर्द्रभक्ति के भावुक वातावरण में मेरा पालन-पोषण हुआ। मेरे जीवन की अध्यात्म-यात्रा सगुण साकार भक्ति की छत्रछाया में आरंभ हुई।

सौभाग्य से बाल्यावस्था के प्रारंभिक गुरु भी परम भक्त थे। स्वयं सदाचार का जीवन जीते थे और अपने शिष्यों को जीवन में सदाचरण धारण करने की प्रभावशाली शिक्षा देते थे। हिंदी की भक्तिभावमयी पाठ्य पुस्तक से ही उन्होंने मेरी प्राथमिक शिक्षा आरंभ की थी। इसका भी जीवन पर गहरा असर पड़ा।

किशोर अवस्था प्राप्त होते-होते आर्यसमाज के संपर्क में आया। यद्यपि महर्षि दयानंदजी के आध्यात्मिक विचारों का मन पर घनीभूत प्रभाव पड़ा, तथापि सगुण-साकार की भक्ति नहीं छूट पायी। परंतु अंधभक्ति और अंधविश्वासों से अवश्य बहुत कुछ छुटकारा मिला। सामाजिक कुरीतियों के प्रति प्रबल विद्रोह के भाव भी जागे। कुल मिला कर मैंने देखा कि अध्यात्म के क्षेत्र में मेरा प्रमोशन ही हुआ।

सदाचारमय जीवन जीने का और चित्त को विकारों से सर्वथा विमुक्त रखने का लक्ष्य प्रबल होता गया। परंतु युवावस्था प्राप्त होते-होते हजार चाहने पर भी काम, क्रोध और अहंकाररूपी शत्रु मन पर सवार होने लगे। भागवतगीता का मन पर बहुत गहरा प्रभाव था। विशेष कर बारहवें अध्याय में वर्णित भक्त के लक्षण जीवनादर्श को पुष्टि प्रदान करते थे। स्थितप्रज्ञता की व्याख्या भावविभोर करती थी। रंगून के विभिन्न धार्मिक अवसरों पर जनसमूह के बीच गीता की महानता पर प्रवचन देता। स्थितप्रज्ञता की प्रशंसा करता हुआ नहीं अघाता। परंतु बहुधा ऐसे प्रवचनों के बाद घर लौट कर अपने में स्थितप्रज्ञता का सर्वथा अभाव देख कर मन उदासी से भर-भर उठता। **वीतरागभयक्रोधः ...** की **स्थितधिः** अवस्था प्राप्त

करने के लिए मानस छटपटाता। नित्य प्रातः की आर्द्र भक्ति और गीता के आदर्श को जीवन में उतारने का दृढ़संकल्प मन को कुछ समय के लिए अवश्य शांत करता, परंतु शीघ्र ही पुनः काम, क्रोध और अहंकाररूपी शत्रुओं का गुलाम हो जाता।

ऐसे में विपश्यना में सम्मिलित होने का एक अवसर सामने आया। "बुद्ध" के प्रति असीम श्रद्धाजन्य आकर्षण और "बौद्ध धर्म" के प्रति उतना ही प्रखर विकर्षण होने के कारण प्रारंभिक झिझक होते हुए भी इस विद्या को आजमा कर देखने का निर्णय किया। मेरा परम सौभाग्य जागा। बुद्ध की शिक्षा के प्रति जो नितांत निराधार भ्रांतियां थीं वे दूर हुईं। विपश्यना विद्या विज्ञानसम्मत है, युक्तिसंगत है, तर्कसंगत है, अंधविश्वासों से सर्वथा विमुक्त है, साधक को किसी सांप्रदायिक बाड़े में बांधने का दुष्कर्म नहीं करती, बल्कि सभी बाड़ेवंधनों को तोड़ती है। यह विद्या सर्वथा सार्वजनीन है, सार्वभौमिक है और सार्वकालिक यानी सनातन है, यह सत्य प्रत्यक्षतः प्रकट हुआ। और सबसे बड़ी सच्चाई यह प्रकट हुई कि यह विद्या आशुफलदायिनी है। पहले ही शिविर में शारीरिक ब्याधि ही दूर नहीं हुई, बल्कि मन की ब्याधि को भी दूर करने की कारगर चिकित्सा प्राप्त हुई। यह भी स्पष्ट हुआ कि यह विद्या भारत के उच्च आध्यात्मिक सिद्धांतों की क्रियात्मक प्रयोगशाला है। बुद्ध की सही शिक्षा के क्षेत्र में पांव रखते ही मुझे लगा कि मेरा नया जन्म हुआ। आर्यसमाज के प्रभाव से आध्यात्मिक क्षेत्र में जो प्रमोशन हुआ था वह अब डबल प्रमोशन में बदल गया। विकारमय चित्त को विकारों से विमुक्त करने की संजीवनी औषधि मिल गयी। अध्यात्म के क्षेत्र का खुला राजमार्ग मिल गया। मैं निहाल हो गया। जिन गलियों में-से गुजरते हुए इस राजमार्ग पर पहुँचा, उनके प्रति मन में जरा भी दुर्भावना नहीं जागी। बल्कि उन अनुभवों को भी अत्यंत कल्याणकारी माना। उन्हीं से तो आध्यात्मिक जीवन का आधार मिला था। परंतु राजमार्ग पर कदम रखने पर ही अंतिम लक्ष्य तक पहुँचने का सहज, स्वस्थ व्यावहारिक आधार मिला।

जब यह मालूम हुआ कि भारत की यह अत्यंत पुरातन विद्या भारत से ही नहीं, बल्कि सारे विश्व से सर्वथा विलुप्त हो चुकी है, केवल यहीं ब्रह्मदेश

में गुरु-शिष्य परंपरा द्वारा चंद संतों ने इसे अपने मौलिक शुद्ध रूप में जीवित रखा है तब इस कल्याणकारी परंपरा के प्रति, मेरे विपश्यना गुरु के प्रति और मेरी धर्ममयी मातृभूमि के प्रति कृतज्ञताविभोर हो उठा। इससे भी अधिक कृतज्ञता भगवान बुद्ध के प्रति जागी। मुझे लगा कि भगवान बुद्ध ने अनेक जन्मों तक महान कष्ट सहते हुए सभी पारमिताओं की परिपूर्णता प्राप्त कर जो सम्यक संबोधि उपलब्ध की, वह मानो मेरे लिए ही की। मेरी मुक्ति के लिए ही की। धर्मराज सम्राट अशोक ने यह कल्याणी विद्या अरहंत सोण और उत्तर के माध्यम से ब्रह्मदेश भेजी, वह मानो मेरी मुक्ति के लिए ही भेजी। यहां की संतपरंपरा ने इस विद्या को मानो मेरे लिए ही संभाल कर रखा। मेरे धर्मपिता सयाजी ऊ बा खिन सरकारी जिम्मेदारियों में पूर्णतया व्यस्त रहते हुए भी थोड़े-थोड़े लोगों के लिए जो विपश्यना शिविर लगाते रहे, वे भी मानो मेरे लिए ही ऐसा करते रहे। और फिर अपने पूज्य बाबा की याद आयी। असीम कष्टों का सामना करते हुए राजस्थान की मरुधरा से इस धर्मदेश में वे मेरे लिए ही आकर बसे। अतः उनके प्रति भी मन कृतज्ञता के भावों से ओतप्रोत रहने लगा। परिणामतः श्रद्धा और कृतज्ञता के पुनीत भावों से उद्वेलित हुए मन मानस से राजस्थानी दोहों के रूप में मेरे हृदयोद्गार बार-बार प्रस्फुटित होते रहे। बर्मा छोड़ कर भारत आने पर दुखियारे लोगों की धर्मसेवा करते हुए भी ये उद्गार स्वतः प्रकट होते ही गये। ये दोहे अत्यंत वैयक्तिक हैं, स्वान्तःसुखाय हैं। अतः इनके प्रकाशन की ओर कभी ध्यान नहीं दिया और न ही इसे आवश्यक समझा। परंतु इन दोहों पर कुछ अंतरंग साधकों की नजर पड़ी। वे इन्हें पढ़ कर भावविभोर हुए। एक विदेशी साधक ने इनके गहन भावों को यथार्थतः समझ कर उन्हें अंग्रेजी भाषा में प्रकट किया। तब पहली बार अंग्रेजी अनुवाद सहित 'बाबा दोहा' की पुस्तक प्रकाशित हुई। परंतु उसका वितरण बहुत थोड़े से लोगों तक सीमित रखा गया। यह पुस्तक बर्मा के मेरे एक मित्र साधक के हाथ लगी। वह इससे अत्यंत प्रभावित हुआ। उसने इन दोहों का बर्मी भाषा में अनुवाद कर दिया। तदनंतर इसे प्रकाशित भी कर दिया। वहां यह अत्यंत प्रसिद्ध हुई। धीरे-धीरे भारतीय साधकों में भी इसकी चर्चा होने लगी और सभी साधकों के भले के लिए इसके प्रकाशन के लिए मुझ पर दबाव पड़ने लगा। अतः बाबा के बर्मा आगमन की १२५ वीं वर्षगांठ के शुभ अवसर पर इसे

सब के लाभार्थ प्रकाशित करने का निर्णय किया। इसमें कुछ एक प्रासंगिक लेख भी सम्मिलित कर दिये, जो कि पहले 'विपश्यना' पत्रिका में प्रकाशित हो चुके थे। एक-दो नए लेख भी लिखे और इसमें जुड़े। नितांत स्वान्त:सुखाय और अत्यंत वैयक्तिक होने पर भी यदि इन दोहों के प्रकाशन से बहुजन का हितसुख हो, तो यह प्रकाशन अवश्य सफल सिद्ध होगा, सार्थक सिद्ध होगा।

सब का मंगल हो! सब का कल्याण हो!!

कल्याणमित्र,

सत्यनारायण गोयन्का

धन्य बाबा!

थे बिरमा भल बासियो

अतीत के झरोखे में से झांक कर देखता हूं। मानस पटल पर एक कल्पनाजन्य आकर्षक दृश्य उभरता है।

१२५ वर्ष पूर्व की एक ऐतिहासिक घटना।

लगभग १८ वर्ष की उम्र का एक उत्साही नवयुवक बीकानेर राज्य के चूरू नगर से एक अनजाने दूर देश की दुर्गम यात्रा के लिए निकल पड़ता है। यात्रा सचमुच दुर्गम है। परंतु युवक का अदम्य उत्साह उसे कदम-कदम आगे बढ़ा रहा है। उन दिनों चूरू तक रेलगाड़ी नहीं थी। अतः रेगिस्तान के रेतीले रास्तों पर कहीं पैदल तो कहीं ऊंट पर सवार होकर बीकानेर राज्य से दूर ब्रिटिश राज्य की एक रेल्वे स्टेशन तक पहुँचता है। इस सुदूर स्टेशन से रेल पकड़ कर कलकत्ते की ओर रवाना होता है। इस युवक की यह पहली यात्रा है। अपने जीवन में पहली बार घर छोड़ कर आजीविका के लिए बाहर निकला है। कलकत्ता पहुँचता है। वहां चूरू के अथवा उसके आसपास शेखावाटी के अनेक लोग रोजी-रोजगार के लिए बसे हुए हैं। चाहता तो वह भी वहीं बस जाता। परंतु लगता है कोई अदृश्य शक्ति उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित कर रही है। आगे समुद्र की लंबी और कष्टप्रद यात्रा है। युवक ने न कभी रेल की यात्रा की थी और न कभी समुद्र की। तिस पर भी दुगुने उत्साह से और दृढ़ निश्चय से उन दिनों की अत्यंत कष्टजनक लंबी यात्रा एक छोटे से जहाज में सवार होकर पूरी करता हुआ रंगून पहुँचता है।

कल्पनापट पर इस दृश्य के उजागर होते ही मनमानस में एक दूहा उभर आया –

दर कूंचा दर मंजलां, दर चाल्यो परदेस।
कित बरमा कित मुरधरा, जंगल मंगल देस॥

एक कूचे से दूसरे कूचे की ओर, एक मंजिल से दूसरी मंजिल की ओर लगातार कष्ट उठाते हुए आगे बढ़ता गया। उस तृण-विहीन मरुधर की

अनुपजाऊ भूमि से चलता हुआ, बरमा के इन हरे-भरे जंगलों की मंगलमयी उपजाऊ धरती पर पहुँच कर संतोष की सांस ली। और फिर एक और दूहा मानस में फूट पड़ा –

काली कोसां आवियो, पायो कस्ट अनेक।
पोता तो सुख पाविया, मिली धरम री टेक॥

ऐसी लंबी दुर्गम यात्रा करते हुए तुमने सचमुच बेहद कष्ट उठाया, परंतु इसके फलस्वरूप तुम्हारे पोतों को कल्याणकारी शुद्ध धर्म का मांगलिक आधार मिल गया। वे सुखी हो गये। और इसी प्रसंग में एक और दूहा फूट पड़ा –

और देस जा बिणजता, धन तो पाता भोत।
पण बाबा! बिरमा बिना, कठै धरम री जोत॥

आप यदि किसी अन्य देश में जा बसते तो वाणिज्य व्यवसाय की वंशगत प्रवीणता और कठिन परिश्रम के बल पर भले धन तो प्रचुर मात्रा में कमा भी लेते, परंतु तुम्हारे वंशजों को विपश्यनारूपी शुद्ध धर्म की ज्योति बर्मा छोड़ कर अन्यत्र कहां उपलब्ध होती?

विपश्यना की सर्वहितकारिणी, आशुफलदायिनी विद्या अपनी जन्मभूमि भारत से ही नहीं, प्रत्युत जहां-जहां गयी वहां-वहां समय बीतते-बीतते सर्वथा विलुप्त होती गयी। केवल इस एक धर्मदेश बर्मा के संतों ने ही सदियों तक इसे शुद्ध रूप में संभाल कर रखा। क्योंकि बाबा बरमा में बसा, इसलिए मेरा जन्म भी इस धर्मभूमि पर हुआ। अन्यथा सत्य धर्म के संसर्ग से दूर ही कहीं बार-बार जन्म लेता रहता।

भारत के पौराणिक धर्मग्रंथों ने समुद्री यात्रा को दोषपूर्ण बता रखा था। फिर भी इस निषेध का उल्लंघन करके तुमने समुद्र का लंघन किया, तभी हमें इस कल्याणी विपश्यना का सत्य धर्म मिला। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर यह एक और दूहा उभरा –

सांच धरम सै दूर ही, होता जळम अनेक।
जै बाबो ना तोड़तो, काळै पानी रेख॥

इसी से संबंधित एक और दूहा जाग उठा –

बाबा! रैतो भटकतो, लख चोरासी जून।
होतो प्रमुख प्रधान नित, आटो पाणी लूण॥

यदि सत्य धर्म न मिलता तो सचमुच चौरासी लाख योनियों में ही भटकता रहता और हर योनि में आटा, पानी और नमक यानी पेट भरने के लिए खान-पान की खोज ही प्रमुख बनी रहती। इससे ऊंची अमृतरस प्रदायिनी कोई अधात्मविद्या भी है, इसे जान ही नहीं पाता।

बाबा के असीम उपकार के प्रति आभार प्रकट करता हुआ एक और दोहे की गूंज जाग उठी –

बाबा तैरे कारणै, पायो सुबरण देस।
अन धन रा तोड़ा नहीं, मिलग्यो धरम असेस॥

बाबा! तेरे ही कारण इस स्वर्णभूमि का आवास मिला। पर्याप्त अन्न-धन-संपदा का उपभोग मिला और इससे भी बड़ी उपलब्धि यह हुई कि यहां धर्म की परिपूर्णता प्राप्त हुई। केवल शील पालन करने में धर्म की परिपूर्णता नहीं है। गहन समाधि में समाहित हो जाने में भी धर्म की परिपूर्णता नहीं है। परंतु प्रत्यक्ष ज्ञानमयी प्रज्ञा जाग्रत करके अंतर्मन में जन्म-जन्मांतरों के संचित संगृहीत अनुशय रूपी भव-प्रदायी कर्मसंस्कारों का पूर्णतया उत्खनन कर देने वाली विपश्यना के संयोग में ही धर्म की परिपूर्णता है। इसी परिपूर्ण धर्म की यहां प्राप्ति हुई।

इसी संदर्भ में एक दूहा और उभरा –

बुद्ध धरम अर संघ पर, स्रद्धा जगी अटूट।
बाबा! मिली विपस्सना, पीयूं इमरत घूंट॥

बुद्ध और उनकी शिक्षा के प्रति कितना भ्रांतिभरा जीवन जी रहा था। विपश्यना मिली तो बुद्ध, धर्म और संघ पर अटूट श्रद्धा जागी। बुद्ध के प्रति श्रद्धा इसलिए नहीं जागी कि उनकी मूर्ति को बार-बार प्रणाम करने से अथवा उनके नाम का बार-बार जाप करने से अथवा भक्तिभाव से द्रवीभूत होकर उसकी प्रशंसा प्रशस्ति के गीत गा लेने से वे अत्यंत प्रसन्न होकर मुझे भव-संसरण के दु:खों से मुक्त कर देंगे। बल्कि इसलिए जागी कि उन्होंने विपश्यना जैसी आशुफलदायिनी विद्या खोज निकाली, जिससे स्वयं भी

मुक्त हुए तथा इस विद्या के प्रशिक्षण द्वारा औरों के लिए भी मुक्ति का सर्वहितकारी वैज्ञानिक मार्ग प्रशस्त कर दिया।

धर्म के प्रति इसलिए श्रद्धा जागी कि इसमें धर्म के नाम पर कर्मकांड का विधान नहीं है, अंधविश्वास के आधार पर किसी दार्शनिक मान्यता को मान लेने का दुराग्रह नहीं है, किसी सांप्रदायिक बाड़े में बांध लेने का कुटिल षडयंत्र नहीं है, धर्म के सैद्धांतिक पक्ष को ही बुद्धि अथवा श्रद्धा के स्तर पर स्वीकार कर लेने मात्र में ही इसकी इतिश्री नहीं है, बल्कि सारा महत्त्व इसके व्यावहारिक पक्ष को दिया गया है ताकि धर्म धारण किया जाय। यह जीवन में उतरे। जीवन का अंग बन जाय।

संघ पर श्रद्धा इसलिए नहीं जागी कि ये हमारे संप्रदाय से जुड़े हैं, बल्कि इसलिए कि ये धर्म धारण करके आदर्श जीवन जी रहे हैं। ऐसे धार्मिक व्यक्ति गृहत्यागी हों या गृहस्थ, संघ ही हैं, संत ही हैं। अतः पूज्य ही हैं।

शील और समाधि तो अन्यत्र भी मिल जाती। पर प्रज्ञामयी विपश्यना से दूर ही रह जाता। भवमुक्ति के अमृत रसपान से दूर ही रह जाता।

शील, समाधि और प्रज्ञा की त्रिवेणी में डुबकी लगे तो परिपूर्ण धर्म के सत्फल स्वरूप मुक्ति का अनमोल रत्न प्राप्त हो।

सील समाधि ग्यान रा, रतन मिल्या अनमोल।
बाबा! दाळद मिट गया, सुफळ हुई या खोळ॥

सांसारिक धन वैभव की प्राप्ति से लौकिक दारिद्र्य भले दूर हो जाय, परंतु हे बाबा! भव-भव भटकने का दुःख दारिद्र्य तो परिपूर्ण धर्म के अनमोल रत्न की प्राप्ति से ही दूर होता है। सचमुच इन तीन रत्नों को पाकर ही भवविमुक्ति उपलब्ध कर सकने की क्षमता रखने वाली यह मनुष्य योनि सफलीभूत हुई।

बाबा के उपकार के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करता हुआ एक और दोहा छलक पड़ा –

थे बिरमा भल बासियो, सारा मिटग्या सोक।
बाबा! दोनूं सुधरग्या, लोक और परलोक॥

बाबा! तुम कहीं और बस जाते तो विपुल धन-दौलत कमा कर लोक सुधरने की भ्रांति तो भले स्वीकार कर लेता, परंतु तुमने तो ऐसा धर्मदेश चुना, जहां बस कर लोक और परलोक दोनों वस्तुतः सुधर गये। भव-भव के सारे दुःख मिट गये।

इसी भाव को उद्वेलित करता हुआ एक और दोहा मनमानस में थिरक उठा –

चांदी सा चावळ अठै, ईं सोनै रै देस।
तीन रतन जगमग जगै, गूंजै बुध संदेस॥

अन्न-धन उपजाने वाली यह स्वर्णभूमि सांसारिक दुःख दूर करने के लिए पर्याप्त साधनों से भरपूर है, परंतु इस देश में बुद्ध, धर्म और संघ रूपी तीन अनमोल रत्न भी जगमगा रहे हैं। यहां की धरती और आकाश पर पावन बुद्धवाणी गूंजती रहती है, जिसका पालन करके भव-भव के दुःखों से छुटकारा मिलता है। बुद्धवाणी में ही बुद्ध का रत्न समाया हुआ है।

और फिर –

बाबा! बिरमा बास कर, कर्यो घणो कल्याण।
बुद्ध धरम अर संघ री, सरण मिली सुख खान॥

सचमुच बाबा! तुमने हमारा कितना कल्याण किया। तुम इस धर्मदेश में आ बसे, जिससे कि हमें त्रिरत्न की शरण द्वारा परम सुख की खान मिल गयी। सचमुच जीवन धन्य हो गया।

बाबा के उपकार ही उपकार याद कर चित्ताकाश में असीम कृतज्ञता के मेघ उमड़ आये।

तेरो पुन परताप है, वा रै बाबा वाह।
सुत पोता पड़पोतरा, पड़्या धरम री राह॥

सचमुच बाबा! तेरे पुण्य प्रताप से ही तुम्हारे बेटे, पोते और पड़पोते शुद्ध धर्म के मांगलिक पथ के पथिक बने।

इन्हीं भावों से विभोर हुआ एक और दोहा उमड़ा –

पांच पीढियां तर गयीं, सांच धरम रै पाण।
आगै नै तिरसी किती? बाबा! पुन्न महान॥

तुम्हारी ही बदौलत शुद्ध धर्म के पथ पर चलते हुए पांच पीढ़ियां तो तर गयीं। भविष्य में भी कितनी ही और तरेंगी, इसमें संदेह कहां? यह तुम्हारे महान पुण्य का ही प्रताप है।

जननी जन्मभूमि

जन्म देने वाली जननी कितनी प्यारी लगती है! इसी प्रकार जिस धरती पर जन्मा, यह जन्मभूमि भी उतनी ही प्यारी लगती है। दोनों की गौरव-गरिमा स्वर्ग सदृश ही है। जन्मभूमि स्वर्ग जैसी ही गरिमामयी होती है। मुझे भी मेरी जन्मभूमि स्वर्ग के नंदन वन सदृश मनोहारी लगती है। इसी भाव से अभिभूत होकर एक दोहा मानस में उमड़ पड़ा –

यदि धरती पर सुरग है, नंदनवन सुरधाम।
तो बाबा! बिरमा जिसो, और न देस ललाम॥

यदि कोई कहे कि धरती पर भी नंदन वन लिये हुए कोई देवलोक है तो हे बाबा! इस विरुद को धारण करने वाला बर्मा सदृश और कौन देश हो सकता है? सचमुच यदि धरती पर स्वर्ग है और स्वर्ग का नंदनवन है तो वह बर्मा ही है। उस जैसा अन्य कोई देश नहीं।

जन्मभूमि के गौरव से संबंधित एक और दोहा प्रस्फुटित हुआ।

महामुनि री सरण मँह, रतनपुंज सो धाम।
जळमभूम बाबा मिली, किसी' क सुखद ललाम॥

बाबा! मेरा भाग्य जागा जो बर्मी नरेश की राजनगरी रत्नपुंज (यडनाबौं) मांडले जैसी जन्मभूमि मिली, जो कि सचमुच धर्मधाम ही है, पावन तीर्थभूमि ही है। क्योंकि यहां महामुनि बुद्ध के प्राचीन मंदिर के पवित्र शांत वातावरण में शरण गमन की पावन तरंगें व्याप्त हैं जो तन मन को पुलक-रोमांच से भर देती हैं। प्रीति प्रमोदभरे सुख की पावन उर्मियों से उर्मिल कर देती हैं। अत्यंत मनोहारी है, मनोरम है!

अपनी जन्मभूमि के प्रति धन्यता का भाव लिये हुए एक और उद्गार प्रकट हुआ –

स्वेडगोन मिंदर भलो, बिरमा भलो सुदेस।
बाबा! भली विपस्सना, भलो बुद्ध संदेस॥

देशों में देश, उत्तम सुदेश ब्रह्मदेश! सचमुच उत्कृष्ट है, अनुपम है। क्योंकि यहां अनुपम उत्कृष्ट स्वेडगोन चैत्य है, जहां भगवान गौतम बुद्ध के अतिरिक्त इस कल्प के अन्य तीन बुद्धों के पावन अवशेष भी सन्निधानित हैं। इस देश के गांव-गांव में, नगर-नगर में, गृहस्थों के घरों में और भिक्षुओं के विहारों में भगवान बुद्ध के सदुपदेशों की मंगल वाणी गूंजती रहती है। और इन सबसे बढ़ कर इस देश में भगवान बुद्ध द्वारा अन्वेषित और प्रसारित की गयी कल्याणी विपश्यना विद्या सहस्राब्दियों से अपने शुद्ध रूप में सँजो कर, संभाल कर सुरक्षित रखी गयी है।

इसीलिए इस संदर्भ में एक और दोहा मुखरित हो उठा –

ई धरती रै गरभ मँह, भर्या रतन आगार।
पण बाबा! अनमोळ तो, धरम रतन भंडार॥

कैसी धनवंती है मेरी यह जन्मभूमि, यह रत्नगर्भा वसुंधरा, जिसके गर्भ में बहुमूल्य हीरे, पन्ने और माणक मणियों के अकूत खजाने भरे पड़े हैं। पर सबसे विशिष्ट तो यहां धर्म रत्न का भंडार है, जो अनमोल है। उसका कोई क्या मूल्यांकन कर सकेगा? इसी रत्न के कारण मेरी मातृभूमि विश्व भर में सबसे धनी धरती है।

बाबा! मैंने अपने व्यापार-धंधे के सिलसिले में अनेक बार पृथ्वी की परिक्रमा की, अनेक देशों का निरीक्षण किया। विश्व के अनेक देश कितने ही मनोरम क्यों न हों, मुझे अपनी मातृभूमि-सी मनोरमता कहीं नहीं मिली। यह परम मनोरम लगी, तभी यह दोहा प्रकट हुआ –

देख्या देस-दिसावरां, फिर्यो घणा परदेस।
पण बाबा! बिरमा जिसो, मिल्यो न मनहर देस॥

सौभाग्य से मैंने बचपन से ही अपनी मातृभूमि के दर्शन करने के अनेक अवसर प्राप्त किये। बारह वर्ष की उम्र में ही मांडले से ताजी (सांची) होते हुए शान प्रदेश की सुंदर पहाड़ियों पर बसे कल्लो नगर गया और १२ से १८ वर्ष की उम्र तक अनेक बार मांडले से मेम्यो की यात्रा की। एक बार नौछो से गोटाइक पुल तक की यात्रा भी की। इन मनहर पर्वतों और पठारों के दर्शन मन पर गहरी छाप लिये हुए हैं। विद्यार्थी जीवन में १२ से १६ वर्ष

की उम्र तक प्रतिवर्ष मांडले से मचीने तक की यात्रा करता और बड़े भैया के पास गर्मी की छुट्टियां मनाता। वहां हिमालय के उत्तुंग शिखरों से बह कर आती हुई कलकल निनादिनी ईरावदी के तट पर स्नान करने जाता। वर्षा ऋतु आरंभ होने के पूर्व नदी का पाट इतना चौड़ा नहीं होता। तट पर पहाड़ी पथ से घिसते-पिसते चिकने हुए गोल-मटोल पत्थरों से तट पटा होता। पारदर्शी स्वच्छ जल में ये पत्थर स्पष्ट दीख पड़ते। वहां तेज बहती नदी में डुबकी लगाते हुए मन आनंदविभोर हो जाता। यही ईरावदी नदी जब मांडले तक पहुँचती तब विशाल रूप धारण कर लेती है। वर्षा ऋतु में तो इसका पाट इतना चौड़ा हो जाता है, इसका बहाव इतना तेज हो जाता है, इतना खतरनाक हो जाता है, तिस पर भी बार-बार डुबकी लगाते हुए मन नहीं भरता था। इसी मनोरम नदी पर मांडले से जहाज पर सवार होकर मिंबू, मग्वे, अलाम्यो, पगान और प्रोम तक की मनभावनी यात्रा भी की, जिसकी मनोहारनी छाप मानस पटल पर अब तक अंकित है। वह कितनी लुभावनी है!

माडले से मनेवा (मौंज्वा) तक रेलयात्रा, मनेवा से कलेवा तक की चिंदविन नदी पर जहाज की यात्रा, कलेवा से टम्मू तक कभी बैलगाड़ी पर बैठ कर और कभी बैलगाड़ी के साथ-साथ पैदल चलने की लंबी यात्रा, कितनी विकट थी, फिरभी स्वदेश के इस अनदेखे प्रदेश की यात्रा हृदयस्पर्शी थी। देश के पश्चिमोत्तर भूभाग की इस ऐतिहासिक यात्रा की छाप मानस पटल पर अमिट बनी रहेगी।

इसी प्रकार दक्षिण में हैंजडा, बसीन, पगो तथा मौलमीन तक के स्वदेश दर्शन की लुभावनी स्मृतियां भी मानस पटल पर अटल जैसी बन गयी हैं। स्थान-स्थान पर दूर-दूर तक फैले हुए धान के लहलहाते खेत, बीच-बीच में विभिन्न फलों से लदे हुए पेड़ मेरी मातृभूमि का **सुजलां सुफलां शस्यश्यामलाम्** रूप उदार प्रकृति द्वारा दिये गये मुक्तहस्त वरदान की चित्ताकर्षक बानगी प्रस्तुत करता है। ऐसे उपजाऊ और प्रकृति प्रदत्त सौंदर्य से प्रफुल्लित दृश्य अन्य देशों में भी देखे परंतु मेरी मातृभूमि से उनका कोई मुकाबला नहीं। जिस धरती के रज-रज से, अन्न-जल से, फल-फूल से मेरा यह पार्थिव शरीर बना; जिस पवित्र भूमि की पावन पवन लहरियों ने मुझे

प्राणदान दिया, उसकी तुलना किसी अन्य देश की भूमि से कैसे की जा सकती है?

जन्म लेते ही जिस धरती में मेरी नाभि की नाल काट कर गाड़ी गयी, उसके प्रति असीम आकर्षण और आत्मीयता का भाव हृदय में उद्वेलित होना स्वाभाविक है। परंतु उसी भूमि पर यदि कोई दूसरा जन्म भी ग्रहण करे और द्विज बने तो कृतज्ञता असीम हो उठती है। इसी ब्रह्मभूमि पर मेरा दूसरा जन्म हुआ। पहला जन्म मां के गर्भ से बाहर आने पर हुआ और दूसरा सयाजी ऊ बा खिन के इन्यास्याइंग स्थित विपश्यना केंद्र में अविद्या के खोल को विदीर्ण करके मिला। उस दूसरे जन्म का तो कहना ही क्या? मातृभूमि बर्मा में यह जो दूसरा जन्म मिला, यही तो वास्तविक जन्म था। जैसे पक्षी अपनी माता के उदर से एक अंडे के रूप में जन्म लेता है। पर उसका असली जन्म तो तभी होता है जबकि वह उस अंडे की खोल को तोड़ कर बाहर निकलता है। इसीलिए द्विज कहलाता है। दो बार जन्म लेने वाला प्राणी कहलाता है। इसी प्रकार जब गुरुदेव की कृपा से मैं विपश्यना के अभ्यास द्वारा अविद्या के खोल को तोड़ कर बाहर निकला, तभी मेरा दूसरा जन्म हुआ। सही जन्म हुआ। मैं भाग्यशाली द्विज बना। ऐसा दूसरा जन्म मुझे इस कल्याणी धरती को छोड़ कर विश्व में और कहां प्राप्त होता भला! इसीलिए इस पावन जन्मभूमि के प्रति अत्यंत आभारी हूं। अपने बाबा के प्रति अत्यंत आभारी हूं। अपने धर्मपिता सयाजी ऊ बा खिन के प्रति अत्यंत आभारी हूं।

विपश्यना के स्वर्णिम अतीत की एक झांकी

संजीवनी विपश्यना का सुधारस पान कर पुरातन साहित्य पर नजर दौड़ायी तो अतीत के झरोखे में से अनेक हृदयग्राही दृश्य उभरे। देखा कि विपश्यना के आगमन से बहुत पहले, सदियों से इस देश का भारत के साथ निकट का संबंध रहा। सहस्रों वर्षों से पारस्परिक आवागमन होता रहा। भारत के पुण्यशील व्यक्ति ब्रह्मदेश आते रहे और यहां के भाग्यवान लोग भारत की यात्रा करते रहे। यद्यपि ये यात्राएं अत्यंत कष्टसाध्य थीं, भयानक थीं, खतरनाक थीं, फिर भी दोनों देशों के लोगों का आवागमन निरंतर होता रहा। इसे देख कर मन मानस में यह दोहा उमड़ पड़ा –

बाबा! आता ही रया, पुन्नसील गुणवान।
उत गङ्गा इत रावती, सहसां बरस प्रमाण॥

गंगा और इरावती नदियों की पावन भूमियों से लोगों का पारस्परिक आवागमन सहस्रों वर्षों से होता आया है। भारत के अन्य अनेक भागों से भी लोग यहां आते रहे हैं। बंग प्रदेश के ताम्रलिप्ति बंदगाह से अथवा पश्चिमी तट के सुप्पारक पत्तन बंदरगाह से अथवा दक्षिण के महाबलीपुरम के बंदरगाह से बड़ी-बड़ी नौकाओं में सवार होकर लोग व्यापार हेतु यहां आते रहे। उनमें से अनेक यहां आकर बस भी गये। कुछ एक ने अपने व्यापार की शाखाएं खोल कर भारत से अपने प्रतिनिधि स्वरूप कुछ मुनीम-गुमास्तों को लाकर यहां बसा दिया। उनके साथ व्यवसाय से संबंधित अन्य अनेक आवश्यक कर्मचारी भी यहां आ बसे। उनसे प्रेरणा पाकर अन्य छोटे-मोटे व्यापारी भी आजीविका उपार्जन के लिए यहां आ बसे। धीरे-धीरे यह आबादी बढ़ती गयी। ये प्रवासी भारतीय भारत की भाषा, साहित्य, संस्कृति, वास्तुकला, चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्यकला तथा संगीत आदि ललित कलाओं को भी अपने साथ ले आए; जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव इस देश की सभ्यता और संस्कृति पर पड़ा। उनमें से अधिकांश इस देश की विशाल वेगवती नदियों के मुहानों पर दक्षिणी बर्मा के समुद्र तट पर बस गये। उन

दिनों इस देश के जो मूल निवासी थे वे 'प्यू' कहलाते थे। वे बहुत सज्जन थे। प्यू शब्द का अर्थ ही विनम्र और सज्जन होता है। प्रवासी भारतीय उनसे पूरी तरह घुलमिल गये। उन्होंने यहां के स्थानों को भारतीय नाम दिये, जो कि यहां के लोगों को बहुत भाये। उन्होंने इन नामों को सहर्ष स्वीकार कर लिया। जिन तीन नदियों के मुहानों पर ये बसे, उन्हें सार्थक नाम दिये गये। एक को कहा इरावती (एरावती), दूसरी को कहा चित्तंग (सिट्टांग) यानी वह नदी जिसकी मनोरमता इतनी आकर्षक थी कि वह चित्त का एक अंग बन कर सदा के लिए उसके साथ जुड़ गयी। और तीसरी गहन साल वनों के बीच से बह कर आती हुई सालवन (सालवीन) कहलाई। इस देश की मनोहारी रमणीयता को देख कर इसे 'रमण्यदेश' कहा गया। यहां की सदा हरी-भरी रहने वाली उपजाऊ धरती धनधान्य से भरपूर होने के कारण इसे हरिभुंज देश भी कहा गया। यहां के निवासी मैत्री करुणा जैसे ब्राह्मी गुणों में संपन्न होने के कारण यह ब्रह्मदेश भी कहलाया जो आगे चल कर म्रम्म अथवा म्यंमा कहलाने लगा और इसी प्रकार बर्मा भी। कुछ आगे चल कर पूर्व और दक्षिण की ओर सोने की खाने रही होंगी अथवा उन नदियों से बह कर आते हुए सोने के कण इनके तटों पर बिखरे रहते होंगे, जैसे कि आज भी कहीं-कहीं किसी-किसी नदी तट की रेती पर मिलते हैं और जिन्हें लोग इस रेती को धोकर निकालते हैं। अतः इस देश को स्वर्णभूमि कहा गया। इसकी राजधानी को 'सुद्धमावती' (थटोन) कहा। स्वर्णभूमि पूर्व में स्याम (थाईलैंड) के एक बड़े भाग को समेटे हुए थी और दक्षिण में 'धनसिरिं' (तनासरिं) से आगे मलय देश (मलेशिया) के अंतिम छोर पर बसे सिंहपुर (सिंगापुर) तक फैली हुई थी। यह अनुमान करना गलत नहीं होगा कि स्वर्णभूमि की राजधानी सुद्धमावती के राजा सिंह ने ही सिंहपुर नगर बसाया था। प्यू जाति की राजधानी 'प्यू ग्राम' पुगांव (पगान) और दक्षिण में सिरी खेत्तर (श्रीक्षेत्र) और वितनुपुर (विष्णुपुर) बसा था। प्यू देश की दक्षिणी सीमा समुद्र तट तक 'प्यू सीम' पुसीम (पसीम) (पतैं) तक थी। इसके आगे जहां आज रंगून है वहां उक्कल (उत्कल) नगर था। इसी नगर के दो व्यापारी तपस्सु और भल्लिक व्यापार हेतु भारत आते-जाते रहते थे। एक ऐसी ही व्यापारिक यात्रा के दौरान उनका कारवां निरंजरा नदी के किनारे-किनारे उरुवेल प्रदेश में-से गुजर रहा था। वहां उन्होंने भगवान बुद्ध

के दर्शन किये, जिन्होंने सात सप्ताह पूर्व सम्यक संबोधि प्राप्त की थी। उन दोनों व्यापारियों ने अपने साथ लाये हुए बर्मा के भात और मधु से बने मोदक उन्हें अत्यंत श्रद्धापूर्वक भेंट किये। सात सप्ताह पूर्व सुजाता की खीर के आहार के पश्चात सम्यक संबुद्ध का यह पहला भोजन था। इस भोजनदान में इन दोनों भाइयों का ही नहीं, बल्कि पूरे ब्रह्मदेश का सौभाग्य समा गया। दोनों भाई इस भोजनदान का पुण्यलाभ प्राप्त कर अत्यंत प्रसन्न हुए। उनके आग्रह पर भगवान ने उन्हें अपने सिर के बालों के आठ गुच्छे दिये, जिन्हें अत्यंत श्रद्धापूर्वक ग्रहण कर वे अपने देश लौट गये। वहां के राजा ओक्कलापा (ओक्कलपति) ने उन्हें सादर स्वीकार कर बोटठौं और सूले में दो-दो गुच्छे और शेष चार गुच्छे श्वेडगोन पर चैत्य बना-बना कर सन्निधानित किये। इन पावन केश धातुओं से ब्रह्मदेश का भगवान बुद्ध के साथ प्रथम पार्थिव संपर्क हुआ।

तपस्सु और भल्लिक भगवान से धर्म सीखने के लिए तत्काल पुनः मगध देश गये। वहां उनकी शिक्षा से भल्लिक अर्हंत हुआ और सद्धर्म की स्थापना के लिए अपने पूर्वजों की भूमि बाह्लिक (बलख) में जा बसा। तपस्सु स्रोतापन्न हुआ और गृहस्थ रह कर स्वदेश लौट आया। इस प्रकार उसके साथ बुद्ध की शिक्षा का यहां प्रथम आगमन हुआ।

उन्हीं दिनों सुवर्णभूमि की राजधानी सुद्धम्मवती में राजा सिंह के राज्यकाल में भगवान बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य अरहंत गवंपति यहां पहुँचा और उसने यहां सद्धर्म की स्थापना की।

परंतु बर्मा में सद्धर्म का प्रबल रूप से प्रवेश तो तब हुआ जब कि सम्राट अशोक के राज्यकाल में राजधानी पाटलिपुत्र में हुई तीसरी संगीति के समापन पर उनके गुरु महास्थविर भदंत मोग्गलिपुत्त तिस्स ने पड़ोसी देशों में धर्म प्रसारण के लिए धर्मदूत भेजे। तब स्वर्णभूमि के सौभाग्य से अरहंत सोण और उत्तर धर्मरत्न लेकर यहां पहुँचे। उन्होंने यहां सबसे पहला उपदेश ब्रह्मजालसुत्त का दिया। इसमें भगवान की शिक्षा के सैद्धांतिक पक्ष के साथ-साथ विपश्यना के रूप में उसका व्यावहारिक पक्ष भी समाया हुआ है। इस सूत्र के दिये गये उपदेश से यह मानना गलत नहीं होगा कि उस समय वहां के लोगों में बासठ प्रकार की मिथ्या दृष्टियों में से कुछ एक अवश्य

प्रचलित रही होंगी। तभी यह उपदेश प्रासंगिक रहा होगा, जिससे कि इस सूत्र द्वारा उनका निराकरण हो सके। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि इन मिथ्या दृष्टियों से संबंधित कई प्रकार की साधनाएं भी प्रचलित रही होंगी, जिनकी अंतिम मंजिल साधक को वेदना की अनुभूति तक ही ले जा पाती थी और वेदना द्वारा तृष्णा और दुक्ख का ही प्रजनन करती थी। जबकि विपश्यना द्वारा वेदना के अनित्य स्वभाव का अनुभव करके उसके प्रत्यय से होने वाली तृष्णा को दूर करते हुए समता को पुष्ट कर वेदना के परे नित्य, शास्वत, ध्रुव परमसत्य तक पहुँचाने की विधा प्राप्त होती है। इस ऐतिहासिक घटना के आधार पर मानस में दो दोहे उभरे –

बाबा! राज असोक रो, होयो धरम प्रसार।
स्वरणभोम निरमल हुयी, बही धरम री धार॥

सचमुच उसी समय बर्मा में धर्म की धारा प्रबल वेग से प्रवहमान हुई।

बाबा! भला पधारिया, भिक्खू उत्तर सोण।
बाजी भेरी धरम री, गूंज्या चारूं कोण॥

बाबा! जब अरहंत भिक्षु सोण और उत्तर इस स्वर्णभूमि पर पहुँचे तो भगवान की धर्मवाणी की भेरी इस देश के कोने-कोने में गूंज उठी और जन-जन के मन मानस में समा गयी।

पुन्य धरा पर धरम री, जागी उजली जोत।
बाबा! कण कण मँह भर्यो, मंगल ओत परोत॥

इस पुण्यमयी धरती पर जब धर्म की निर्मल ज्योत जागी तो देश में सर्वत्र समा गयी और फलस्वरूप कण-कण में मंगल और कल्याण का समावेश हो गया। इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना से केवल ब्रह्मदेश ही निहाल नहीं हुआ, बल्कि उस देश में भगवान बुद्ध की पावन वाणी और मुक्तिदायिनी विपश्यना विद्या दोनों शुद्ध रूप में संभाल कर रखी जाने के कारण, २२-२३ शताब्दियों बाद भारत भी इससे निहाल हुआ और विश्व भी। यदि इस देश के संतों ने परियत्ति और प्रतिपत्ति इन दोनों धर्मरत्नों को शुद्ध रूप में संभाल कर न रखा होता तो यह विद्या मुझे कैसे प्राप्त होती? औरों को भी कैसे प्राप्त होती? कृतज्ञता के भावों से तनमन सराबोर हो उठा।

ऐतिहासिक काल-प्रवाह के साथ पूर्व की ओर से आए हुए मोन-खमेर जाति के लोग भी यहां की मूल प्यू जाति से सम्मिश्रित हो गये और सब के सब मोन कहलाने लगे। कालांतर में भारत के आंध्रप्रदेशीय तैलंगना के तैलंग लोग भी इस भूमि पर आ बसे और इसी मोन जाति के सम्मिश्रण से जिनकी उत्पत्ति हुई वे तैलंग (तलाईं) कहलाने लगे। लेकिन अंततः प्रमुख रूप से यह जाति मोन के नाम से ही प्रसिद्ध रही। बर्मा के इस दक्षिणी तटवर्ती देश में पीढ़ी-दर-पीढ़ी मोन राज्य कायम रहा। यहां के संत भिक्षुओं ने भगवान की वाणी तिपिटक के साथ-साथ उनकी दी हुई व्यावहारिक 'विपश्यना' विद्या को शुद्ध रूप में कायम रखा। उन संत आचार्यों की क्रमवद्ध नामावली काल के प्रवाह में विगलित विस्मृत हो गयी, लेकिन वाणी और विद्या कायम रखी गयी। इसका एक ऐतिहासिक प्रमाण हमारे सामने है।

आज से लगभग १००० वर्ष पूर्व पगान की राजधानी में आधुनिक म्यंमा जाति का एक महान विक्रमी शासक हुआ, जो अनोरथ (अनिरुद्ध) के नाम से प्रसिद्ध हुआ और जिसने सारे ब्रह्मदेश को एक साम्राज्य में जोड़ने का महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक कार्य किया। उन्हीं दिनों दक्षिण में मोन राज्य का राजा मनुआ था। उसके राज्य के निवासी पूज्य अरहंत धम्मदस्सी (असिं अरहं) ने जब यह जाना कि पगान क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि सारे मध्य और उत्तर बर्मा में भगवान का शुद्ध धर्म अत्यंत विकृत हो चुका है, न वहां सही वाणी प्राप्य है और न ही विपश्यना की सही साधना, तब वे अत्यंत करुणचित्त से राजधानी पगान पहुँचे और सम्राट अनोरथ से मिल कर उसे धर्म की सही शिक्षा समझायी। अनोरथ बहुत समझदार शासक था। उसे सही तथ्य समझने में देर नहीं लगी। उसके मन में यह धर्मसंवेग जागा कि उसके राज्य में धर्म का शुद्ध स्वरूप पुनः स्थापित हो। इसके लिए उसने अरहंत धम्मदस्सी से परामर्श किया। अरहंत धम्मदस्सी ने उसे बताया कि दक्षिण के मोन राजा मनुआ के पास इस समय संपूर्ण तिपिटक के तीस सेट सुरक्षित हैं। आप उनमें से एक या दो सेट मँगवा लीजिये। इससे आप के साम्राज्य में शुद्ध धम्मवाणी का प्रसार हो सकेगा। वहां अनेक शैक्ष्य (सेक्ख) और अशैक्ष्य (असेक्ख) संत भिक्षु भी मौजूद हैं। उनमें से कुछ एक को यहां सादर बुलवाइये ताकि भगवान की विपश्यना विधि का भी यहां प्रसार हो सके।

सेक्ख उसे कहते हैं जो कि आर्य हो गया। यानी स्रोतापन्न, सकृदागामी अथवा अनागामी तो हो गया, परंतु अभी तक अरहंत नहीं हुआ। इसलिए उसे अभी कुछ और सीखना बाकी है, इसीलिए शैक्ष्य या सेक्ख कहलाया। परंतु जिसने अरहंत अवस्था प्राप्त कर ली उसे और कुछ सीखना नहीं बचा, अतः वह अशैक्ष्य (असेक्ख) कहलाया।

स्पष्ट है कि सेक्ख और असेक्ख की अवस्था विपश्यना विद्या द्वारा ही उपलब्ध की जा सकती है। अतः उन दिनों यह विद्या निश्चितरूप से दक्षिण बर्मा में विद्यमान थी। फिर जब यह पगान आयी तो इस मध्य बर्मी देश में स्थापित हुई। तदनंतर अरहंत धम्मदस्सी (असिं अरहं) पगान छोड़ कर उत्तर की ओर, आज के सगाईं नगर की पहाड़ी पर जा बसे। वहां शेष जीवन स्वयं भी तपते रहे और वहां के लोगों को भी यह कल्याणी विद्या सिखाते रहे। साथ-साथ धर्मवाणी का भी प्रसारण करते रहे। इसके आगे परवर्ती काल में जो आचार्य परंपरा चलती रही उनकी नामावली भी उपलब्ध नहीं है। उन दिनों धर्म शासन का क्रमवद्ध इतिहास लिखने की प्रथा नहीं थी। लेकिन यह वाणी और यह विद्या अपने शुद्ध रूप में अवश्य कायम रही, तभी लगभग १५० वर्ष पूर्व हुए महान आचार्य भदंत लैडी सयाडो ने इस शुद्ध परंपरा को प्राप्त कर इसका प्रभूत प्रसारण किया।

भदन्त लैडी सयाडो

मेरे परदादा गुरु परम आदरणीय भदन्त लैडी सयाडो को स्मरण करता हूं तो मनमानस असीम कृतज्ञता के भावों से भर-भर उठता है। वे परियत्ति यानी बुद्धवाणी और पटिपत्ति यानी विपश्यना, इन दोनों में पूर्ण पारंगत थे। सदियों से चली आ रही इस विद्या को उन्होंने आचार्य परंपरा से प्राप्त किया और इसे अत्यंत करुण चित्त से जीवन भर बांटते रहे। वे अत्यंत दूरदर्शी थे। एक मान्यता सदियों से चली आ रही थी कि भगवान बुद्ध के २५०० वर्ष बाद यह भगवती विद्या यहां से अपने उद्गम देश भारत वापस लौटेगी और वहां प्रतिष्ठित होकर सारे विश्व में फैलेगी। वे देख रहे थे कि आगामी १०० वर्ष के भीतर यह महत्त्वपूर्ण घटना घटने वाली है। इसे क्रियान्वित करने के लिए केवल भिक्षुओं पर निर्भर करना उचित नहीं होगा। अतः जो विपश्यना

विद्या सदियों पर्यंत केवल भिक्षुओं तक ही सीमित रही, उन्होंने उसका द्वार गृहस्थों के लिए भी खोल दिया। भगवान बुद्ध के समय भिक्षु और भिक्षुणी और इसी प्रकार गृहस्थ उपासक और उपासिकाएं ये चारों संघ के लोग धर्म के प्रबुद्ध आचार्य हुआ करते थे। परंतु समय बीतते-बीतते यह विद्या केवल भिक्षुओं तक ही सीमित रह गयी। यह लैडी सयाडोजी का ही उपकार था कि उन्होंने यह प्रतिबंध हटा कर इसे गृहस्थों के लिए उद्घाटित किया और एक गृहस्थ किसान सयातैजी को इस विद्या में निपुण किया ताकि वह अधिक से अधिक लोगों में इस विद्या का प्रसारण कर सकें। यदि वे ऐसा न करते तो मुझे यह विद्या कैसे प्राप्त होती? अन्य अनेकानेक गृहस्थों को कैसे प्राप्त होती?

सयातैजी

इस युग के प्रथम गृहस्थ विपश्यना आचार्य हुए। उन्होंने अपने उत्तरदायित्व को इस कुशलता और धर्मतापूर्वक निभाया कि हमारे यह दादागुरु हमारे लिए एक आदर्श गृहस्थ विपश्यना आचार्य के रूप में प्रबल प्रेरक बन गये।

सयाजी ऊ बा खिन

सयातैजी के चरणों में बैठ कर मेरे धर्मपिता सयाजी ऊ बा खिन ने यह कल्याणी विद्या प्राप्त की। उनके उपकार का तो कहना ही क्या? कैसे वात्सल्यभरे प्यार से, असीम मैत्री और करुणा से उन्होंने मेरे जैसे सामान्य गृहस्थ को विपश्यना के सांचे में ढाल कर इस योग्य बनाया कि मैं अपना कल्याण कर सकूं तथा औरों के कल्याण में भी सहायक बन सकूं। उनका उपकार असीम है। उनके प्रति कृतज्ञता का भाव असीम है। उनके प्रति जब आदर और कृतज्ञता के भाव जागते हैं तो साथ-साथ मेरी जन्मभूमि के प्रति भी आदर और कृतज्ञता के भाव हृदयसागर में उमड़ने लगते हैं। इन्हीं भावों से उद्वेलित होकर कुछ दोहे प्रस्फुटित हुए –

बाबा! बिरमा ही मिल्यो, गुरुवर संत सुजान।
सुद्ध धरम ऐसो दियो, हुयो परम कल्याण॥

हे बाबा! इस बर्मा देश में ही संत सुजान गुरुवर मिले, जिन्होंने ऐसा शुद्ध धर्म प्रदान किया जिससे कि परम कल्याण हुआ। इसीलिए हे बाबा! बर्मा देश का अत्यंत आभारी हूं और इसीलिए –

बाबा! बिरमा देस को, गुण गाऊं दिन रैन।
जळमभोम की गोंद मँह, मिली सांति सुख चैन॥

जन्मभूमि की गोद बहुत सुखदायी होती है। पर उस जन्मभूमि का तो कहना ही क्या, जिसकी गोंद में बैठ कर अध्यात्म की असीम सुख-शांति प्राप्त की। उस मातृभूमि के दिन-रात गुण गाऊं तो भी कम ही हैं।

ईं धरती ही पाबियो, बुद्ध धरम रो सार।
बाबा! को कर भूलस्यूं, बिरमा रो उपकार?

हे बाबा! इस जन्मदात्री धरती पर ही मुझे भगवान बुद्ध के ज्ञान का सार प्राप्त हुआ। मातृभूमि के इस असीम उपकार को क्या मैं कभी भूल पाऊंगा?

बाबा! निरमल धरम रो, उमड्यो हियै उछाव।
सरधा अर किरतग्यता, विमल भक्ति रो भाव॥

यह जो अनमोल रत्न इस धरती पर प्राप्त हुआ, उसे याद करते-करते मन में बहुत बड़े उत्सव का भाव जागता है। जीवन में इससे बड़ा उत्सव और क्या होता भला? इसी कारण हे बाबा! इस मातृभूमि के प्रति श्रद्धा जागती है, कृतज्ञता जागती है और निर्मल निष्काम भक्ति जागती है।

रोम रोम किरतग हुयो, बिरमा रै उपकार।
बाबा! कदे न भूलस्यां, बिरमा रो आधार॥

बहुत रोमांच होता है, जब-जब मानस में यह स्मृति फूटती है कि मेरी मातृभूमि बर्मा ने मेरा कितना बड़ा उपकार किया! मुझे कैसा अनमोल उपहार दिया! रोम-रोम कृतज्ञता के भावों से पुलकित हो उठता है। मातृभूमि पर रहते हुए शुद्ध धर्म का जो आधार मिला, हे बाबा! उसे क्या मैं कभी भूल सकता हूं भला!

धारित धर्म की कड़ी परीक्षा

जीवन में वस्तुतः धर्म धारण किया या नहीं, मानस धर्म से समरस हुआ या नहीं, सांसारिक द्वन्द्वों का सामना करते हुए समता अटल हुई या नहीं, इसकी परीक्षा की घड़ी आयी। मेरा सौभाग्य कि पूज्य गुरुदेव के गंभीर प्रशिक्षण से और भगवती विपश्यना के गहन अभ्यास से मैं इस द्वंद की घड़ी में विजयी हुआ।

बर्मा की तत्कालीन सैनिक सरकार का अत्यंत कृतज्ञ हूं कि उन्होंने इस परीक्षा की घड़ी में धर्म की भूमि पर अविचल, निष्कंप खड़े रहने का अवसर प्रदान किया। कल का अत्यंत धनसंपन्न व्यक्ति अपनी धन-दौलत से, जमीन-जायदाद से, व्यापार-व्यवसाय से, बैंक की जमापूंजी से, १०० रु. के नोटों से और सभी उद्योगधंधों से वंचित कर दिया गया। तब यह धर्म का ही प्रभाव था कि मन जरा भी विचलित नहीं हुआ, उदास नहीं हुआ, व्याकुल नहीं हुआ। बल्कि जर-जमीन के समाजीकरण कर लिए जाने पर मन प्रसन्नता से भर उठा। जिस सरकारी कार्यालय में बुला कर मुझे यह आदेश दिया गया, वहां से लौटते हुए यों लगा जैसे सिर पर से बहुत बड़ा बोझ उतर गया। अतः यही गुनगुनाते हुए घर लौटा –

गुड़ थो माखी खावियो, भनभनाट स्यूं छूट।

जब तक गुड़ था, तब तक मक्खियों की भनभनाहट सहनी पड़ती थी। अब मक्खियों ने सारा गुड़ खा लिया तो भनभनाहट की पीड़ा से छुटकारा मिला।

और छुटकारा भी ऐसा कि जीवन में अब जो यह अनमोल अवसर मिला है उसे धर्म को गहराइयों तक समझने और धारण करने में इसका सदुपयोग कर सकूं। घर आते ही जातक कथाओं पर एक शोध-प्रबंध तैयार कर रहा था, उसे पूरा करने में लग गया। सायंकाल पूज्य गुरुदेव के विपश्यना केंद्र पर गया तो मेरे चेहरे पर उदासी के स्थान पर प्रसन्नता की मुस्कराहट देख कर गुरुदेव भी हर्षविभोर हो उठे और यही कहा, 'तुम्हारी

विपश्यना सफल हुई।' इस अप्रिय घड़ी में भी तुम प्रसन्नचित्त से मुस्करा रहे हो यह विपश्यना विद्या की आशुफलदायिनी क्षमता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

उन दिनों बार-बार मानस में यही भाव जागता था –

ईं धरती पर ही मिल्या, अन-धन संपद कोस।
बाबा! ओटी सूंपता, हुवै न मन मँह रोस॥

– हे बाबा! जो भी अन्न, धन, संपदा का विपुल कोष मुझे प्राप्त हुआ, वह इस धरती के कारण ही तो हुआ, इस धरती पर ही तो मिला। यह तो इसी की संपदा है। इसे वापस सौंपते हुए मेरे मन में द्वेष और दुर्भावना, रोष और आक्रोश कैसे जाग सकते हैं भला?

और फिर,

बिरमा रै परताप ही, पायी संपद भोत।
ईं री ईं नै सूंपता, मन मलीन ना होत॥

यह मेरी मातृभूमि का ही प्रताप था, जिससे मुझे विपुल संपदा प्राप्त हुई। यह संपदा तो इसी की है। इसको सौंपते हुए मेरा मन मलीन क्यों होवे भला?

और फिर यह भाव जागा –

धन तो आवण जाणियो, धूप छांह रो खेल।
पण बाबा! धन धरम तो, जळम जळम रो मेल॥

धर्म की धर्मता का यह भाव सहज ही मन में जागा कि जो भी भौतिक संपदा है वह तो आती है, जाती है। ठीक वैसे ही जैसे धूप आती है, जाती है। छांह आती है जाती है। वह नित्य नहीं है, शाश्वत नहीं है, ध्रुव नहीं है, यही तो धर्म ने सिखाया। यही तो अनित्यबोध ने अनुभूति के स्तर पर समझाया। उसके विछोह पर मन क्यों उदास हो भला! प्रसन्नता ही प्रसन्नता है क्योंकि इस धरती ने जहां अनित्यधर्मा धन दिया, संपदा दी, ऐश्वर्य दिया, वैभव दिया, पर बाबा! वहीं इसने एक नित्यधर्मा अनमोल धन भी तो दिया। धर्म का धन दिया, जो कि न केवल इस जन्म में बल्कि आगे आने वाले जन्मों में भी अक्षुण्ण बना रहेगा। घटेगा नहीं, बढ़ता ही जायगा।

और यही कारण है कि इस परम कल्याणी धर्मगंगा में डुबकी लगा कर मन आनंदविभोर होकर गा उठा–

किसो'क चाख्यो धरमरस, छूट गया रस ओर।
बाबा! सुख समता जिसो, दिसै न कोई ठौर॥

बाबा! सचमुच मैंने बहुत प्रकार के सुखों का उपभोग किया। धन कमाने का सुख, धन संचित करने का सुख, धन का दान देकर अहंकार से भर उठने का सुख, वैभव का सुख, ऐश्वर्य का सुख, यश का सुख, कीर्ति का सुख, बुद्धिकिलोल करते हुए धर्म के नाम पर वाणीविलास करने का सुख, लोगों से प्राप्त हुई वाहवाही का सुख, भक्ति से विह्वल होकर आनंद की लहरों में लहराने का सुख, भक्तिरस में डूब कर कुछ देर के लिए शांति प्राप्त करने वाले ध्यान का सुख, किसी मंत्र को दोहराते हुए चित्त की एकाग्रता प्राप्त करने का सुख। इस प्रकार न जाने कितने सुखों का रसास्वादन किया। लेकिन जब परम पूज्य गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन की करुण अनुकम्पा द्वारा प्राप्त विपश्यना से चित्त की समता का जो सुख मिला, उसकी कोई तुलना नहीं, कोई मुकाबला नहीं। उसका कोई माप नहीं, उसकी कोई परिमिति नहीं, परिमाण नहीं। सारे सुख उसके सामने फीके लगने लगे।

यह कितना सच है बाबा! कि स्वादिष्ट से स्वादिष्ट भोजन और शीतल से शीतल जल चाहे जितनी बार भरपेट खाऊं और पिऊं, फिर भी इससे न भूख मिटती है न प्यास। बार-बार भूख जागती रहती है, प्यास जागती रहती है। परंतु जब यह अनमोल धर्म रस का पान कर लिया जाता है तो जनम-जनम की, भव-भव की तृष्णा की त्रास मिट जाती है। धर्मरस से बढ़ कर और क्या रस होगा बाबा! मेरा भाग्य जागा कि मुझे इस पावन धरती पर परम पूज्य गुरुदेव की असीम कृपा से इस धर्मरस के पान का शुभ अवसर मिला।

तभी इन भावों से भरा यह दोहा फूट पड़ा–

खातां पीतां रैन दिन, मिटी न भूख न प्यास!
बाबा! चाख्यो धरम रस, मिटी जीव की त्रास॥

जीवन में एक नया मोड़ आया

सारी व्यापारिक, व्यावसायिक और औद्योगिक जिम्मेदारियों से पूर्णतया विमुक्त होकर अब सारा समय इस अनमोल धर्मरसपान में ही बीतने लगा। किसी भी सांसारिक सुख-सुविधा का रंच मात्र भी आकर्षण नहीं रह गया। बहुत कीमती नए मॉडलों की कारों में बैठने पर जो अहंकारभरा सुख था उसके मुकाबले अब भीड़भरी बसों में बैठे-बैठे अथवा खड़े-खड़े घर से गुरुदेव के ध्यानकेंद्र तक आने और जाने में कहीं अधिक सुख महसूस होने लगा। मुझे याद है जब अपनी कार में सवार हो कर जाता था तो जीवन की व्यस्तता के कारण व्यापार-संबंधी कोई-न-कोई फाइल अथवा पत्रादि साथ रहते थे और विपश्यना केंद्र पहुँचने तक उन्हें देखने-भालने में ही उलझा रहता था। परंतु अब इस बस की यात्रा में ऐसा कोई बोझ नहीं। आंखें खुली होने पर भी मन भीतर। अनित्यबोध की समता का रसास्वादन करता रहता। इस सुख का क्या मुकाबला भला! और फिर साधना केंद्र पहुँच कर, गुरुदेव के चरणों में बैठ कर घर पर जिस सूत्र का अध्ययन करके जाता, उस पर गुरुदेव से चर्चा होती। जहां मेरी समझ ठीक होती, वहां उनकी ओर से प्रोत्साहनभरी स्वीकृति के दो शब्द सुनने को मिलते और जहां कोई भूल होती, वहां उनके द्वारा प्यारभरे शब्दों से दोष की ओर इशारा करके सही अर्थ समझाया जाता। इसके बाद वे कहते, जाओ! शून्यागार में ध्यान करो। उस समय जब शून्यागार में बैठ कर ध्यान करता तो उस सूत्र का सार विपश्यना की अनुभूति के साथ जुड़ कर अधिक से अधिक स्पष्ट होता जाता। कभी-कभी यह सोच कर मन इतना कृतज्ञताविभोर हो जाता कि भगवान बुद्ध ने इस सूत्र का उपदेश मेरे ही लिए दिया था। इससे मेरा कितना कल्याण हुआ।

इस प्रकार यह सुखमय जीवन बीतता गया। मेरे जीवन के ये चार-पांच स्वर्णिम वर्ष, सचमुच अनमोल थे, अतुल थे। परंतु यकायक एक घटना घटी –

पूज्य गुरुदेव की यह अत्यंत प्रबल धर्मकामना थी कि वे भारत जाकर वहां के दुखियारे लोगों को भगवान बुद्ध की यह कल्याणी विपश्यना विद्या बांटें। वे बार-बार कहते थे कि हमारे ब्रह्मदेश पर भारत का बहुत पुरातन ऋण है। हमें इस ऋण से उऋण होना है। यह अनमोल विद्या हमें भारत से प्राप्त हुई। हमने इसे इसीलिए संभाल कर रखा कि भगवान बुद्ध के २५०० वर्ष पूरे होने पर द्वितीय शासन आरंभ होते ही हम इसे भारत ले जायँ और उस पुरातन ऋण से उऋण हों। भारत यह अनमोल रत्न कब का खो चुका है। वे जब-जब उस देश में जात-पांत की, ऊंच-नीच की, छूत-अछूत की विषमताभरी बातें सुनते, संप्रदाय-संप्रदाय के बीच होने वाले खूनी दंगों की सूचना पढ़ते, समय-समय पर भारत में होने वाले दुर्भिक्ष की दुःखद गाथा पढ़ते तो अत्यंत करुण चित्त से यही कहा करते थे कि भारत की यह पुरातन विद्या भारत को पुनः प्राप्त होगी तो वह भगवान बुद्ध का देश इन सारे दुःखों से मुक्त हो जायगा। देश में सुख, शांति और समृद्धि छायेगी। विभिन्न संप्रदायों में भ्रातृभाव जागेगा। जन्म के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में होने वाली अनैसर्गिक दूरियां दूर होंगी। विपश्यना उस महान पुरातन देश का परम कल्याण करेगी। वे यह भी बार-बार कहते थे कि अब २५०० वर्ष पूरे हुए। विपश्यना का डंका बज चुका है। यह शीघ्र ही भारत लौटेगी। इस समय वहां अनेक पुण्यपारमीसंपन्न लोगों ने जन्म ले रखा है। वे इसे सहर्ष स्वीकार करेंगे। उस पुरातन देश में विपश्यना की पुनर्स्थापना होगी तो सारे विश्व में फैलेगी। सारे विश्व का कल्याण होगा। इस महान ऐतिहासिक कार्य के आरंभ होने का अब समय आ गया है। वे बहुत आतुर थे कि यह ऋण चुकाने के लिए वे स्वयं भारत जायँ। परंतु तत्कालीन परिस्थितियों के कारण वे ऐसा न कर सके।

उन्हीं दिनों एक घटना घटी। मेरी जननी और जनक कुछ वर्षों पूर्व ही बर्मा छोड़ कर भारत में बसे हुए अपने दो पुत्रों के पास रहने के लिए चले गये थे। बर्मा के बारे में उन्हें न जाने कितनी झूठी-सच्ची बातें सुनने को मिलती थीं। उनका चिंतित होना स्वाभाविक था। उन्हें हम बार-बार लिखते थे कि हमें यहां कोई कष्ट नहीं है। पर फिर भी जननी का हृदय उदासी से भर जाता था, और वह अपना मानसिक सुख खो बैठती थी। मैं इस बात को खूब समझता था कि यद्यपि जननी और जनक दोनों ने यहां पूज्य

गुरुदेव से विपश्यना साधना सीखी है, परंतु भारत में तो इस समय विपश्यना का नामोनिशान नहीं। वहां की सर्वथा विपरीत स्थिति में उन दोनों की विपश्यना छूट गयी। अन्यथा मेरी जननी को ऐसी मानसिक व्यथा कदापि नहीं होती। जी चाहता था कि मैं कुछ दिनों के लिए भारत जाकर उसकी विपश्यना पुनर्जागृत कर उसे इस मनोव्यथा से मुक्ति दिलाऊं। परंतु बर्मी नागरिक था। बर्मा से भारत जाने के लिए पासपोर्ट मिलने की रंचमात्र भी संभावना नहीं थी। फिर भी साहस करके सरकार के संबंधित मंत्रालय को अपना आवेदनपत्र चढ़ाया। उस समय मेरा घनिष्ट मित्र ऊ ति हान विदेश मंत्री था और एक दूसरा मित्र कर्नल मौं मौं खा औद्योगिक विभाग संभाले हुए था। इन दोनों के सत्प्रयत्नों से और देश के सैनिक अधिपति की उदारता से मुझे भारत जाने के लिए पासपोर्ट मिला। मैं प्रसन्न हुआ कि दो-तीन महीने भारत जाकर माता की सेवा कर वापस लौट आऊंगा। पर मुझसे ज्यादा पूज्य गुरुदेव प्रसन्नता से भर उठे। उन्होंने कहा कि भारत जाकर जो काम मैं स्वयं नहीं कर पा रहा, उसे अब मेरे प्रतिनिधि के रूप में तुम पूरा करोगे। हमें बर्मा पर भारत का पुरातन ऋण चुकाना है। यह विपश्यना विद्या का अनमोल रत्न उस देश तक पहुँचाने का काम तुम्हें पूरा करना है। उन्होंने मुझे इस प्राचीन परंपरा के आचार्य पद पर विधिवत आसीन किया और अपने प्रभूत आशीर्वादों से इस उत्तरदायित्व को क्रियान्वित करने के लिए मेरा उत्साह बढ़ाया। लेकिन मेरे भीतर की दुर्बलता बार-बार अपना सिर उठा रही थी। जिस देश ने पिछले लगभग दो हजार वर्षों से इस विद्या की प्रयोगात्मक प्रक्रिया तो दूर, इसका नाम तक भुला दिया उसे मेरे जैसा सामान्य व्यक्ति कैसे पुनर्जीवित कर पायेगा? परंतु गुरुदेव ने ढाढस बँधाते हुए कहा कि तुम यह क्यों सोचते हो कि इतना महत्त्वपूर्ण महान काम तुम अकेले पूरा करोगे। वस्तुतः तुम्हारे साथ मैं जा रहा हूं। धर्म जा रहा है। काम अपने आप होगा। तुम्हें तो केवल माध्यम बनना है। और मैंने साहस बटोर कर अपनी जन्मभूमि को छोड़ अपने पुरुखों की और भगवान बुद्ध की तथा सद्धर्म की पावन धरती की ओर प्रस्थान किया। अपने मन को यही समझाता रहा कि मैं अकेला नहीं हूं, गुरुदेव की असीम मंगल मैत्री के रूप में वे स्वयं मेरे साथ हैं। धर्म की सारी शक्तियां मेरे साथ हैं।

फिर भी मन में थोड़ी झिझक तो थी ही। यहां पहुँच कर जिस वातावरण का सामना करना पड़ा और इस कार्य की कठिनाइयों का चिंतन किया तो दिल बैठने लगा। तब यही निर्णय किया कि मैं अपने माता-पिता को घर में ही विपश्यना का अभ्यास करा कर तीन महीने उनकी सेवा करूं और अपनी मातृभूमि वापस लौट जाऊं। लेकिन ऐसा नहीं होना था। धर्म को मुझसे अपना काम करवाना था। पूज्य गुरुदेव को अपना काम करवाना था। मुझे आश्चर्य हुआ कि भारत पहुँचने के दस दिन के भीतर पहला शिविर लगा। उसमें माता-पिता सम्मिलित हुए। परिवार के कुछ अन्य लोग सम्मिलित हुए। कुछ परिचित और कुछ अपरिचित, कुल मिला कर चौदह लोगों का शिविर लगा। मैंने बड़े धर्म धैर्य के साथ उनकी सेवा की। शिविर आरंभ करने के पूर्व पूज्य गुरुदेव का स्मरण किया और वाणी से ये उद्गार स्वतः प्रस्फुटित हुए। गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता के ये बोल स्वतः उमड़ पड़े –

जै जै जै गुरुदेवजू, जै जै कृपानिधान!
धरम रतन ऐसा दिया, हुआ परम कल्याण॥

ऐसा चखाया धरमरस, विषयन रस न लुभाय।
धर्म सार ऐसा दिया, छिलके दिये छुड़ाय॥

और फिर दुर्बल हुए मन को सबलता प्रदान करते हुए यह दूहा फूट पड़ा –

धरम दिया कैसा सबल, पग पग करे सहाय।
भय भैरव सारे मिटे, निर्भय दिया बनाय॥

और उसके बाद कृतज्ञता विगलित यह एक दोहा फूट पड़ा –

रोम रोम किरतग हुया, ऋण न चुकाया जाय।
जीऊं जीवन धरम का, यह ही एक उपाय।
दुखियन बांटू धर्म सुख, यह ही उचित उपाय॥

और फिर ध्यान आया कि कहीं मुझमें यह मिथ्या अहंकार न जाग जाय कि मैं इन लोगों को धर्म का दान दे रहा हूं! धर्म तो गुरुदेव बांट रहे हैं। अतः आनापान सिखाते हुए अत्यंत विनम्रभाव से यह दोहा फूट पड़ा –

गुरुवर तेरी ओर से, देऊं धरम का दान।
जो जो आये तप करन, हो सब का कल्याण॥

और इसके बाद विपश्यना देते हुए भी ऐसा ही एक पद फूट पड़ा –

गुरुवर तेरा प्रतिनिधि, देऊं धरम का दान।
जो जो आये तप करन, हो सब का कल्याण॥

पहले ही शिविर में जो ये भाव उद्वेलित हुए वे सदा के लिए हृदय में समा गये, वाणी में समा गये और मैं यह भलीभांति समझता रहा कि बर्मा द्वारा भारत का ऋण चुकाने का महान कार्य, विपश्यना के भारत में पुनरागमन का ऐतिहासिक कार्य मैं नहीं कर रहा, बल्कि पूज्य गुरुदेव कर रहे हैं। मैं तो उनका प्रतिनिधि मात्र हूं, एक माध्यम मात्र हूं। इस कार्य में जो सफलता मिल रही है, विघ्न-बाधाएं आती हैं और सहजभाव से दूर हो जाती हैं, यह धर्म के प्रभाव से ही हो पा रहा है। परम पूज्य गुरुदेव के पुण्य-प्रताप से ही हो रहा है। इस मनोदशा के आधार पर शुद्ध धर्म की पावन गंगा इस देश में पुनः बह चली।

भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक धरमचारिका करते हुए, विपश्यना के शिविर लगाते हुए जब-जब अवसर मिलता, स्वयं ध्यान भी करता और कभी-कभी कृतज्ञता के भावों में रमण करने लगता तब स्वतः कोई-न-कोई दूहा फूट पड़ता –

बाबा! बिरमा ही मिल्यो, गुरुवर संत सुजान।
सुद्ध धरम ऐसो दियो, हुयो परम कल्यान॥

सचमुच बाबा! ब्रह्मदेश में ऐसे संत सुजान गुरुवर नहीं मिलते तो धर्म के नाम पर छिलकों में ही उलझा रह जाता। धर्म का शुद्ध सार कहां प्राप्त होता? शील, समाधि और प्रज्ञा ही तो धर्म का शुद्ध सार है। उसकी हजार चर्चा करता, प्रशंसा करता या मिथ्या गर्व भी करता कि हम भी इसे मानते हैं, स्वीकारते हैं, यही तो हमारा भी धर्म है, पर धारण नहीं करता। धारण करने के लिए तो ये जो ऊपर-ऊपर के छिलके हैं, ये जो भिन्न-भिन्न कर्मकांड हैं, दार्शनिक मान्यताएं हैं, अंधभक्ति के भावावेश हैं, उन्हीं में उलझा रहता। और फिर कृतज्ञता के भावों से भरा एक दोहा फूट पड़ता –

धन बाबा! गुरुवर मिल्यो, करुणा को आगार।
आंधै नै आंख्यां मिली, सांच धरम को सार॥

मैं धन्य हुआ बाबा! जो ऐसे गुरुवर मिले। उनका हृदय सदा करुणा से ओतप्रोत रहता है। उनकी कृपा से ही अंधभक्ति और मिथ्या मान्यताओं में उलझे हुए मेरे जैसे अंधे को प्रज्ञाचक्षु मिले और सत्य धर्म का सार मिला। छिलकों से छुटकारा मिला।

कभी यह दोहा फूट पड़ता –

जै गुरुवर मिलतो नहीं, धरम गंग रै तीर।
बाबा! गंगा पूजतो, पी पातो ना नीर॥

धर्म की गंगा का पूजन करना आसान, उसकी वंदना करनी आसान। लेकिन लाभ तो उस धर्मगंगा का अमृत जल पीने में ही है। गुरुवर की कृपा बिना मैं इसे कैसे पी पाता? जन समूह के सामने इस धर्म-गंगा की व्याख्या करता, प्रशंसा करता, स्वयं वंदना करता ओर लोगों को वंदना करने का परामर्श देता। पर नीर न स्वयं पीता, न औरों को पिला सकने की क्षमता रखता।

गुरुदेव की कृपा से ही यह क्षमता प्राप्त हुई। उन्हीं की कृपा से भारत के गांव-गांव, नगर-नगर, प्रदेश-प्रदेश में धर्मचारिका करता रहा। इससे मन संतुष्टिभरी प्रसन्नता से उर्मिल होता रहा। शिविरों में मुरझाए-मुरझाए चेहरे लिए दुखियारे लोग सम्मिलित होते। उन्हें देख कर गुरुदेव की करुणा मेरे हृदय में उद्वेलित होती और उसके साथ-साथ यह दोहा भी –

धर्म गंग रै तीर पर, दुखियारां री भीड़।
गुरुवर! बांटू धरम सुख, दूर हुवै दुख-पीड़॥

गुरुदेव के प्रतिनिधि के रूप में भगवती विपश्यना विद्या द्वारा धर्मगंग के तीर पर एकत्र हुई दुखियारों की इस भीड़ की धर्मसेवा करता और दसवें दिन उनके खिले-खिले चेहरों पर प्रसन्नता का उभार देखता तो मातृभूमि बर्मा के प्रति और धर्मपिता गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता के भावों से भरे हुए दोहों पर दोहे उमड़ पड़ते। जो याद रहते, उन्हें कभी लिख लेता पर बहुत से विस्मृति के प्रवाह में बह जाते।

७-८ वर्ष बीतते-बीतते धम्मगिरि, धम्मखेत्त और धम्मथली के केंद्रों की स्थापना हुई। यहां के हरे-भरे तरु-तृण, फल-फूलों से लदे पेड़-पौधे देख कर गुरुदेव की स्मृति जाग उठती। उन्हें प्रकृति की सुषमा कितनी प्रिय लगा करती थी! इसे याद कर यह पद मुखरित हो उठा –

गुरुवर! तुम कितने खुश होते, देख यहां की हरियाली।
मुरझाए-मुरझाए चेहरों पर, जब छा जाती लाली॥

विपश्यना केंद्र स्थापित हुए। इसके साथ-साथ सारे देश में धर्मचारिका का क्रम भी चलता रहा। प्रत्यक्ष लोक-कल्याण होता रहा। यह देख कर मनमानस में हर्ष की लहरियां हिलोरें भरने लगती। गुरुदेव और विपश्यना के प्रति मेरी कृतज्ञता असीम होती रहती।

विद्यार्थी जीवन में गोस्वामी तुलसीदास का एक दोहा पढ़ा था, जिसमें उसने कहा कि रामभक्ति के कारण उस जैसा भांग का पौधा गुणकारी तुलसी का पौधा बन गया। मेरे मन में भी स्वतः ऐसा भाव जाग पड़ा।

पारस परसै लोह नै, सुबरण देय बणाय।
बाबा! गुरुवर लोह नै, पारस दियो बणाय॥

बाबा! यह लोक मान्यता है कि पारस पत्थर जब मूल्यहीन लोहे को स्पर्श करता है तब उसे बहुमूल्य सोना बना देता है। पर गुरुदेव ने तो इससे भी बड़ा चमत्कार किया। पारस तो लोहे को सोना ही बनाता है, परंतु हे बाबा! गुरुदेव ने तो मुझ जैसे मूल्यहीन लोहे को बहुमूल्य सोना नहीं, बल्कि अनमोल पारस बना दिया। जो इसके संपर्क में आता है, वही लोहे से सोना बनता जाता है। इससे कोई यह न मान बैठे कि इसमें कहीं मेरा कोई चमत्कार है। जो चमत्कार है वह पूज्य गुरुदेव का है। सचमुच बाबा! ऐसे सद्गुरु के संसर्ग में आने से केवल मेरा ही कल्याण नहीं हुआ, बल्कि मुझे माध्यम बना कर उनके द्वारा दिये गये धर्म के संसर्ग में जो आया, वही दुःखमुक्त होता चला गया। होता ही जा रहा है। यह पूज्य गुरुदेव के प्रबल प्रताप से ही हो रहा है। अतः अनायास ही यह दोहा छलक पड़ा –

बाबा! गुरु ऐसो मिल्यो, जीं को प्रबल प्रताप।
जन-जन मँह जागै धरम, दूर हुवै दुख-ताप॥

बाबा! मैं तो व्यापार-व्यवसाय के ऐसे माया-मोहभरे वातावरण में जन्मा और पला, जहां अधिक नहीं तो न्यून मात्रा में ही झूठ-सच और छल-कपट का समावेश रहता ही है। सचमुच मेरा भाग्य जागा जो ऐसे सद्गुरु के संपर्क में आया। अन्यथा सारा जीवन निरर्थक हाय धन! हाय धन! करते ही बीतता। तभी कहा –

बाबा! जै मिलतो नहीं, गुरुवर बिरमा देस।
तो धन कै जंजाल मँह, जीवन होतो सेस॥

बाबा! सचमुच गुरुदेव की ही कृपा हुई। उनके ही प्रताप से हृदय के कपट-कपाट ध्वस्त हुए। ऐसी मलप्रक्षालिनी साधना मिली कि हृदय निर्मलता से भर गया। तभी कहा –

गुरुवर रै परताप स्यूं, कटग्या कपट कपाट।
बाबा! मिली विपस्सना, निरमल हुयो निराट॥

करुणामय गुरुदेव की कृपा से शुद्ध धर्म का पंथ मिला, भवमुक्ति का मार्ग मिला। सारी बाधाएं स्वतः नष्ट हो गयीं, सारे अंतराय अपने आप दूर हो गये। मुक्तिदायी धर्म के द्वार सदा के लिए खुल गये। तभी यह भाव जागा –

बाबा! सत्गुरु की कृपा, करुणा स्यूं भरपूर।
खुल्या किवाड़ा धरम रा, अंतराय ह्वै दूर॥

एक ओर गुरुदेव द्वारा प्रदत्त भगवती विपश्यना के धर्मजल से जब अपने मन के मैल धो-धो कर निर्मलता का सुख भोगता और दूसरी ओर यही धर्मरत्न औरों को बांटता तब मन श्रद्धा से ओतप्रोत हो उठता। तब गुरुदेव के साथ-साथ मां बर्मा की भी याद आती, जिसकी गोद में बैठ कर मैंने इस धर्मरत्न की कमाई अर्जित की और अब इसे भारत में बांट रहा हूं। यह देख कर कृतज्ञताविभोर हृदय से ये भाव अनायास मुखरित हो उठते –

धरम रतन भेळो कर्यो, मां बिरमा री गोद।
इब भारत नै बांटतां, मन मावै नहिं मोद॥

जिस धर्मरत्न की कमाई ब्रह्मदेश में अर्जित की, संचित की उसे अब

भारत में बांटते हुए कितने लोगों का क्लेश दूर होता है! सचमुच इससे बड़ा मोद और क्या होगा?

करी कमाई मोकळी, बाबा! बिरमा देस।
बांटत बांटत बांटतां, कटै जगत का क्लेस॥

धन-संपदा बांटे तो वह प्रत्यक्षतः कम होती जाय, परंतु धर्म-संपदा तो ऐसी है कि बांटने पर जरा भी कम नहीं होती। उल्टे दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ती जाती है। इसे देख कर एक और मोदभरा दोहा निःसृत हुआ –

धरम संपदा बांटतां, बाबा! कम नहिं होय।
दिन दिन दूनी ही हुवै, रात चौगुनी होय॥

सचमुच अपरिमित सद्धर्म बांटने का मोद अनुपम है! अतुलनीय है! असीम है!

एक विकट परिस्थिति

बर्मा से भारत आकर विपश्यना का धर्मरत्न बांटने लगा तो दूसरे वर्ष में ही ऐसा संयोग हुआ कि पश्चिमी देशों की अनेक युवतियां और युवक शिविरों में सम्मिलित होने लगे। वह हिप्पी युग था। उनकी वेशभूषा, उनका रहन-सहन, उनका जीवन व्यवहार, उनका दूषित चारित्र्य गंदगी ही गंदगी से भरा होता था। अपने-अपने देश में सांसारिक संपदाओं का उपभोग करके अब वे भारत की ओर उन्मुख हुए थे। उन्हें आध्यात्मिक सुख की खोज थी। सुना था कि भारत तो प्राचीन समय से अध्यात्म का केंद्र रहा है। वहां ऐसी ध्यान साधना सिखायी जाती है, जिससे मानस असीम आनंद के सागर में समा जाता है। इसी की खोज में वे भिन्न-भिन्न परंपराओं के साधु-संन्यासियों के आश्रमों में जाते रहे। कहीं कुछ मिला, कहीं कुछ नहीं मिला। विपश्यना के शिविरों में भी कुछ लोग आए। उनके कारण हिप्पी समाज में यह बात फैलने लगी कि उनकी खोज विपश्यना में ही पूरी हो सकती है। अन्यत्र नहीं। काल्पनिक मान्यताओं के अंधविश्वास से पूर्णतया उन्मुक्त, सर्वथा वैज्ञानिक, नितांत बुद्धिसंगत और आशुफलदायिनी होने के कारण विपश्यना ने उन्हें चुंबक की तरह खैंच लिया। दस-बीस आते-आते सैंकड़ों की संख्या में आने लगे। वे उन्मुक्त नशे-पते का और स्वच्छन्द मैथुन का सुदृढ़ स्वभाव लिए आते, परंतु जैसे-जैसे विपश्यना के पथ पर आगे बढ़ते, इन दोनों गंदगियों से सहज ही बाहर निकलने लगते। अत्यंत साफ-सुथरा निर्मल और शांतिप्रद सच्चरित्र जीवन जीने लगते। वे जो ढूंढ रहे थे, उसे प्राप्त कर अपने-अपने देश में लौट कर जाते तो उनके स्वजन परिजन ईष्टमित्र और स्नेहसंबंधी उनमें आये हुए सुखद बदलाव को देख कर बड़े प्रसन्न होते। जिस विद्या से उनमें इतना सुखद परिवर्तन आया, उसे वे भी सीखना चाहते। परंतु उन सब के लिए भारत आना सरल नहीं था। यद्यपि विश्व के लगभग अस्सी देशों के हजारों लोग भारत आकर विपश्यना का लाभ ले चुके थे, तथापि उनसे कई गुणा अधिक लोग चाहते हुए भी इससे वंचित थे। अतः मेरे विपश्यी साधकों द्वारा मुझ पर बहुत दबाव पड़ने

लगा कि मैं उनके देश जा कर धर्मचारिका करूं। लेकिन मज़बूरी थी। बरमी सरकार ने कृपा करके मुझे जो पासपोर्ट दिया था, उसमें केवल एक मात्र भारत देश जाने की ही अनुमति थी। अन्य देशों की यात्रा करने की छूट नहीं थी। अत: मैंने उन दिनों की बरमी सरकार को सारी स्थिति समझाते हुए अन्य देशों में जा सकने की मंजूरी प्राप्त करने के लिए आवेदनपत्र चढ़ाया। परंतु स्थानीय बरमी दूतावास ने उसे आगे भेजा ही नहीं। क्योंकि मेरी यह मांग सरकारी नीति के बिल्कुल विरुद्ध थी। जिस व्यक्ति को जिस देश में जाने के लिए पासपोर्ट दिया जाय, वह केवल उसी देश में जाय। अन्य किसी देश में नहीं। यह उन दिनों की बर्मी सरकार का निश्चित नियम था। मेरे लिए दुबिधा खड़ी हुई। मैंने अपने मित्र पूर्व विदेशमंत्री ऊ ति हान को सारी स्थिति समझायी। उस समय तक मेरा दूसरा मित्र कर्नल मौं मौं खा देश का प्रधानमंत्री बन चुका था। ऊ ति हान ने मुझे परामर्श दिया कि मैं इस बारे में उसे सीधे अपील भेजूं। मैंने ऐसा ही किया, पर कोई उत्तर नहीं आया। मालूम हुआ कि ऊ ति हान को कर्नल मौं मौं खा ने अपनी असमर्थता प्रकट की। सरकारी पालिसी के विरुद्ध वह कोई कार्यवाही नहीं कर सकता था। मुझे बड़ी निराशा हुई। मुझ पर न केवल विदेशी साधकों का बहुत बड़ा दबाव था, बल्कि पूज्य गुरुदेव का भी स्पष्ट आदेश था कि भारत में लोगों द्वारा स्वीकृत हो जाने पर विपश्यना को सारे विश्व में फैलाना है। एतदर्थ मुझे विपश्यना के प्रसार के लिए विश्व भर में धर्मचारिका करनी ही होगी। परंतु करूं कैसे?

केवल एक ही विकल्प सामने था कि मैं बरमी नागरिकता छोड़ कर भारत की नागरिकता ले लूं। भारत सरकार अपने नागरिक को जो पासपोर्ट देती है उसमें विश्व के सभी देशों में जाने की अनुमति होती है। कोई प्रतिबंध नहीं होता। लेकिन मैं नहीं चाहता था कि नागरिकता बदलूं। यह विद्या बर्मा ने सदियों से संभाल कर रखी थी। वहीं से भारत आयी। यदि बर्मा की ओर से ही सारे विश्व में जाय तो सारा श्रेय मेरी मातृभूमि को मिले। मैं बर्मी नागरिक के रूप में ही विश्व में धर्मचारिका किया चाहता था। यह बात मैंने अपने मित्र ऊ ति हान तक पहुँचाई तो उसने परामर्श दिया कि वर्तमान नीति के कारण बर्मी सरकार से कोई आशा नहीं करनी चाहिए। लेकिन तुम्हारे पास धर्म का प्रभूत बल है। तुमने धर्म की प्रभूत सेवा की है।

तुम क्यों नहीं धर्म का अधिष्ठान करते, सत्यक्रिया करते, जिससे कि तुम्हारे लिए विश्व में धर्मचारिका करने का मार्ग खुल जाय। सारे व्यवधान दूर हो जायँ। उसका परामर्श पाकर मैंने यही किया। एक ओर भारत सरकार को भारतीय नागरिकता के लिए आवेदनपत्र चढ़ाया, दूसरी ओर बरमी सरकार से फिर अपील की और मन में यह संकल्प किया कि भारत में मेरी धर्मचारिका के दस वर्ष पूरे होने पर या तो बर्मी सरकार मुझे अन्य देशों में जाने की अनुमति दे अथवा भारत सरकार मुझे भारत की नागरिकता और पासपोर्ट दे, जिससे कि मैं गुरुदेव की धर्मकामना पूरी कर सकूं और अपने हजारों धर्मसाधकों के परिजनों और मित्रों को धर्मदान देकर उन्हें कृतार्थ कर सकूं।

इस धर्म अधिष्ठान की सफलता पर मुझे पूर्ण विश्वास था। २२ जून १९६९ को मैं बर्मा से भारत आया था, अतः २२ जून १९७९ तक मुझे विदेश जाने के लिए दोनों में से किसी एक सरकार की अनुमति अवश्य मिल जायगी। इस दृढ़ विश्वास के बल पर १ जुलाई १९७९ के दिन फ्रांस में एक शिविर लगाने के लिए साधकों को अपनी स्वीकृति दे दी। लेकिन दिन-पर-दिन बीतते गये। न बरमी सरकार से अनुमति आने की कोई आशा रही और न भारत सरकार ही मेरे आवेदनपत्र पर कोई निर्णय कर पा रही थी। न जाने उनके लिए क्या कठिनाई थी?

किसी परिचित अधिकारी ने मुझे सरकारी कठिनाई से अवगत कराया। उसने बताया कि यह जो मैं विपश्यना सिखाने के लिए निःस्वार्थभाव से निःशुल्क शिविर लगा रहा हूं इसे देख कर भारतीय पुलिस के जांच विभाग के मन में एक संदेह जागा। भारत में बसे मेरे दो भाई और भतीजे आनंदमार्ग की संस्था के साथ बहुत गहराई से जुड़े हुए थे। सरकार आनंदमार्ग के प्रति शंकालु थी। भले इसका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं था, परंतु सरकार की यह मान्यता थी कि यह एक राजद्रोही संस्था है। अतः मेरे बारे में सरकार को यह संदेह हुआ कि मैं इस संस्था से आर्थिक सहयोग प्राप्त कर प्रच्छन्न रूप से आनंदमार्ग का प्रचार कर रहा हूं। उन्होंने एक-एक करके अनेक शिविरों में अपने गुप्तचर भेजे। केवल यह जानने के लिए कि मेरे विपश्यना शिविरों का आनंदमार्ग से क्या संबंध है? पता नहीं इन गुप्तचरों ने

क्या रिपोर्ट दी? विश्वास करता हूं ठीक ही दी होगी। पर जांच का सिलसिला वंद नहीं हुआ, चलता ही रहा। एक शिविर में जांच के लिए जो जांच अधिकारी आया था, शिविर के अंत में उसने अत्यंत भावुक हो कर कहा कि आप की धर्मसेवा नितांत निर्मल है, निःस्वार्थ है, राजनीतिक उद्देश्यों से सर्वथा उन्मुक्त है। सभी गुप्तचरों ने यही रिपोर्ट दी है। परंतु हमारे उच्च अधिकारी इससे सहमत नहीं हैं। उन्हें यह विश्वास नहीं हो रहा है कि बिना पारिश्रमिक लिये कोई व्यक्ति इतना परिश्रम क्यों कर रहा है? इसलिए पुनः जांच करने के लिए मुझे भेजा है। मैंने जो सच्चाई देखी है वही उन्हें सूचित करूंगा। आप का काम बिल्कुल निर्दोष है। आप जो विद्या सिखा रहे हैं उसका आनंद मार्ग से कोई संबंध नहीं है। मैंने गुप्तचर के रूप में आनंदमार्ग की साधना की भी जांच की है। मैंने इन दोनों में कोई तालमेल नहीं पाया। अपने कथनानुसार उस गुप्तचर अधिकारी ने अवश्य ही अच्छी रिपोर्ट चढ़ाई होगी, लेकिन फिर भी जांच की फाइल बंद नहीं हुई। मैं धर्मसंकट में पड़ा, क्योंकि मैंने फ्रांस में निश्चित समय पर दो शिविर लगाने की स्वीकृति दे दी थी। पहला शिविर एक अत्यंत कीमती युवा क्लब में लगना निश्चित था। मुझे आमंत्रित करने वाले साधकों ने बहुत-सा धन एडवांस में जमा देकर उसे बुक कर लिया था। मैं नहीं पहुँचूंगा तो उन्हें बहुत आर्थिक क्षति होगी और धर्म के प्रति उनका विश्वास भी उठ जायगा।

ऐसी विकट परिस्थिति में धर्म ने आश्चर्यजनक ढंग से काम किया। मेरे पुत्र मुरारी की धर्मपत्नी वत्सला अपने पितामह श्री राधेश्याम मुरारका के पास गयी। उनके सामने सारी समस्या रखी। उन्होंने स्थिति की गंभीरता को समझा और आश्वासन दिया कि वे यह काम करवा देंगे। वे तुरंत नई दिल्ली गये, जहां उन दिनों श्री मुरारजी देसाई प्रधानमंत्री थे। वे श्री मुरारकाजी के घनिष्ट मित्र थे। श्री मुरारकाजी ने उनके सामने सारी स्थिति प्रकट की और शीघ्र निर्णय लेने का आग्रह किया। श्री मुरारजी ने उनके सामने ही तुरंत संबंधित फाइल मँगाई। उसे देख कर कहा कि जांच की रिपोर्टों में इस व्यक्ति के प्रति देश-विरोधी कार्यवाही करने का कोई भी प्रमाण नहीं पाया गया है और न ही आनंदमार्ग से जुड़ने का कोई सबूत है। परंतु फाइल इसलिए बंद नहीं की गयी है कि कौन जाने आगे जाकर पता चले कि इस व्यक्ति का कोई दूषित राजनैतिक मंतव्य है। अतः कुछ वर्षों

तक इंतजार करना चाहिए। जांच कायम रखनी चाहिए। इस पर श्री मुरारकाजी ने अपने मित्र श्री मुरारजी भाई को कहा कि क्या तुम्हारे गुप्तचर मुझसे अधिक जांच कर पायेंगे? तुम्हें मालूम होना चाहिए कि मैंने इस व्यक्ति के पुत्र को अपनी पौत्री विवाह में दी है। क्या बिना जांचे ही दी है? श्री मुरारजी यह सुन कर निरुत्तर हो गये। तुरंत फाइल बंद करने का आदेश लिख दिया। इस पर श्री मुरारकाजी ने कहा कि सरकारी महकमा किस मंथर गति से चलता है यह न आप से अपरिचित है, न मुझसे। मेरे संबंधी को दो-चार दिनों के भीतर ही विदेश जाना है, जिसके लिए कि यह अनुवद्ध हो चुका है। श्री मुरारजी भाई को स्थिति की गंभीरता समझ में आयी और उन्होंने मुंबई अरजेंट आदेश भेजा कि मुझे तुरंत भारतीय नागरिकता दी जाय और साथ-साथ पासपोर्ट भी। शासनतंत्र में यह अनोखी अनहोनी बात थी। लेकिन पूज्य गुरुदेव की महिमा से, उनकी करुणा और मैत्री से मुझे दो दिन के भीतर ही नागरिकता भी मिली और पासपोर्ट भी। तुरंत फ्रांस का वीसा भी मिला और मैं शिविर लगाने के लिए ठीक समय पर फ्रांस पहुँच गया। धर्म के अधिष्ठान ने अपना काम किया।

एक और चमत्कारिक घटना

अब विदेशों में शिविर निरंतर लगने लगे। इससे मन प्रसन्न हुआ। परंतु एक और अनचाही परिस्थिति सामने आयी। मुझे मालूम हुआ कि बर्मी सरकार ने ऐसा नियम बनाया है कि जो बर्मी नागरिक विदेश जा कर अपनी नागरिकता बदल लेता है, वह देश के प्रति गद्दारी करता है। ऐसे व्यक्ति को देश में प्रवेश न दिया जाय, यहां तक कि ट्रांजिट वीसा भी न दिया जाय। मेरे लिए यह सूचना अत्यंत हृदयविदारक थी। मैं अपनी मातृभूमि को सदा के लिए नहीं छोड़ सकता था। पूज्य गुरुदेव नहीं रहे, पर फिर भी धर्म संबंधी अनेक गहन विषयों पर वहां के विद्वान संतों से, विपश्यी साधकों से परामर्श करना मेरे लिए आवश्यक था और इससे भी बड़ी बात यह थी कि मेरे लिए अपनी मातृभूमि का विछोह अत्यंत असह्य था। परंतु सहजभाव से वस्तुस्थिति को स्वीकार करने के अतिरिक्त करता भी क्या?

लेकिन इस अवस्था में अपनी जन्मभूमि की याद बार-बार मन में जागती थी। हजार अनासक्ति का अभ्यास कर लेने पर भी मन में एक कामना जागती रहती थी कि मैं कम से कम एक बार तो फिर अपनी जन्मभूमि की गोद में जा सकूं।

भारत की एक पौराणिक कथा है– श्री कृष्ण मथुरा और गोकुल की ब्रज भूमि में जन्मे, बाल्यावस्था वहां बिताई, युवावस्था वहां बिताई। लेकिन फिर किन्हीं परिस्थितियोंवश उन्हें वह स्थान छोड़ना पड़ा और दूर गुर्जर देश की द्वारिका नगरी में जा बसना पड़ा। लेकिन उनके मन में ब्रज की याद बनी रही। ठीक ऐसी ही मनोदशा मेरी भी थी। अपनी जन्मभूमि से लाया हुआ यह अनमोल धर्मधन बांटते हुए बार-बार उसकी याद मन में जागती थी। अतः इससे संबंधित एक दोहा उमड़ा–

जद जद बांटू धरम रस, याद पाछळी आय।
बाबा! बसग्यो द्वारका, ब्रज मन बिसरत नाय॥

अपना उत्तरदायित्व पूरा करने के लिए मैं अपने पुरखों के इस देश में आ बसा, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि मैं सदा के लिए अपनी जन्मभूमि से दूर हो जाऊं। पर लाचारी थी। हजार न चाहते हुए भी अपनी जन्मभूमि का विछोह सहना ही पड़ेगा। अब तो मैं जीवन भर अपने देश नहीं जा सकता। यद्यपि मैं भी यह खूब जानता था और वहां के मेरे सरकारी मित्र भी खूब जानते थे कि नागरिकता बदलने में मेरा कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं था। व्यापार से छुट्टी तो बर्मा में ही ले चुका था। यहां आकर भी व्यापार संबंधी कोई जिम्मेदारी नहीं उठायी। एक-पर-एक शिविर लगाते हुए सारे भारत में धर्मचारिका करता रहा। व्यापार के लिए समय ही कहां था, और न ही इस जंजाल में पुनः पड़ने की कोई रुचि थी। सर्वथा मुक्त रह कर सारा जीवन धर्मसेवा में लगे रहने का दृढ़ संकल्प था। इसीलिए जब भारत की पैतृक संपत्ति का बँटवारा हुआ और मेरे हिस्से में जो भी संपदा आयी, उसे अपने अनुज राधेश्याम और छहों पुत्रों में बांट कर मैं बिल्कुल निस्संग जीवन जी रहा था। भविष्य में यदि कभी बर्मा जाना भी हुआ तो वहां अपनी किसी पुरानी संपदा पर अधिकार प्राप्त करने का मन में कोई भाव ही न जागे, इसीलिए बहुत पहले बर्मी नागरिक रहने की अवस्था में ही अपनी बर्मा की जायदाद अपने बरमी नागरिक पुत्र बनवारी को स्टॉम्प पेपर पर हस्ताक्षर करके सौंप दी थी। धर्मदूत का जीवन जीते हुए मेरे लिए नितांत अकिंचन रहना ही श्रेयस्कर था। फिर भी सरकार की मजबूरी भी मैं खूब समझता था। जो नियम बने हैं वे सब पर ही लागू होंगे। मुझ अकेले को छूट कैसे मिले भला!

लेकिन मैंने अनेक बार देखा कि सांसारिक दृष्टिकोण से अत्यंत अप्रिय प्रतीत होने वाली घटनाएं किस प्रकार धर्म के प्रभाव से प्रिय और कल्याणकारी बन जाती हैं। सरकार द्वारा मेरे व्यवसाय, उद्योग आदि को ले लिया जाना सांसारिक दृष्टि से एक अप्रिय घटना थी, लेकिन धर्म की दृष्टि से यही मेरे लिए वरदान बन गयी। इसी कारण मुझे चार-पांच वर्षों का जो अनमोल समय मिला उसमें मैं पूज्य गुरुदेव के चरणों में बैठ कर परियत्ति और पटिपत्ति दोनों में गहरी डुबकियां लगा सका। यदि व्यवसाय और उद्योग के उत्तरदायित्व में ही उलझा रहता तो यह नितांत असंभव होता। धर्म में पकने का ऐसा सुनहरा अवसर मुझे कभी नहीं मिल पाता!

इसी प्रकार मैं देखता हूं कि बर्मी सरकार ने मेरे बरमी पासपोर्ट पर भारत छोड़ कर अन्य देशों में जाने की छूट नहीं दी। यदि देती तो वह अधिक से अधिक एक-दो अन्य देशों तक जाने की ही छूट होती। इसके मुकाबले भारतीय नागरिकता प्राप्त की तो विश्व के कोने-कोने में सर्वत्र जाने की सुविधा प्राप्त कर ली। विभिन्न देशों की धर्मचारिका द्वारा उन्मुक्त धर्मसेवा करने लगा। जो बात अप्रिय लगी वही आगे जा कर मेरे लिए वरदान बन गयी।

ऐसी ही अप्रत्याशित कल्याणकारी घटना एक बार फिर घटी।

एक नई समस्या उभरी

भारतीय मूल का व्यक्ति होने के कारण भारत के लोगों की मनोवृत्ति को खूब समझ रहा था। पिछले हजार-डेढ़ हजार वर्षों से यहां बुद्ध की शिक्षा पर जितने बेबुनियादी दोषारोपण किये गये, इससे लोगों के मानस पर 'बौद्ध धर्म' के प्रति एक जुगुप्सा पैदा हो गयी। स्वयं मेरी भी यही दशा थी। विपश्यना और बुद्धवाणी की सच्चाइयों में से गुजरने पर यह भ्रांति दूर हुई। विपश्यना विशोधन विन्यास के शोधकार्य द्वारा एक सत्य यह प्रकट हुआ कि भगवान बुद्ध ने कहीं 'बौद्ध' शब्द का प्रयोग नहीं किया। न अपनी शिक्षा को 'बौद्ध' कहा और न अपने अनुयाइयों को। उन्होंने अपनी शिक्षा को धर्म कहा और अनुयाइयों को धार्मिक। आगे के अध्ययन से यह जानकारी हुई कि उनके लगभग तीन सौ वर्ष बाद जब सम्राट अशोक ने विपश्यना सहित भगवान बुद्ध की संपूर्ण शिक्षा को सर्वजनहितकारिणी पाकर प्रसारित किया, तब उसने भी कहीं 'बौद्ध' शब्द का प्रयोग नहीं किया। उसके जितने भी शिलालेख उपलब्ध हैं उनमें केवल 'धर्म' (धम्म) शब्द का ही प्रयोग है। न जाने यह 'बौद्ध' शब्द कब उपजा, किसने उपजाया और कब से इसका प्रयोग प्रचलित हुआ? जब तक बुद्ध की शिक्षा धर्म कहलाती थी तब तक वह सब के लिए थी। परंतु जब 'बौद्ध धर्म' कहलाने लगी तब मात्र बौद्धों तक सीमित रह गयी। अतः मैंने यही उचित समझा कि जैसे भगवान बुद्ध ने अपनी शिक्षा को धर्म कहा, जैसे सम्राट अशोक ने भगवान की शिक्षा को धर्म कहा, वैसे ही मुझे भी उसे धर्म ही कहना चाहिए। 'बौद्ध' शब्द का प्रयोग लोगों को भगवान की कल्याणकारी विद्या से विमुख करता है। मेरा यह निर्णय सफल साबित हुआ। हर संप्रदाय के लोग बिना किसी झिझक के शिविरों में आने लगे। उन्हें इस विद्या का पूरा-पूरा लाभ मिला। वे अपने आप को 'बौद्ध' कहें या न कहें, वे भगवान बुद्ध के सच्चे अनुयायी बनें। उन्हें 'बौद्ध' न कह कर धार्मिक कहने में ही बुद्ध की सर्वजनहितकारिणी शिक्षा की सही स्वीकृति है, उसका सही सम्मान है। दूसरी ओर मैं इस बात का भी कत्तई विरोध नहीं करता कि भारतीय

समाज की एक बड़ी संख्या के लोग, जो सहस्राब्दियों से समाज के कर्णधारों द्वारा दमित किये गये, दलित किये गये, शोषित और पीड़ित किये गये, वे यदि विद्रोह के भाव में अपने आप को 'बौद्ध' कह कर अपने लिए एक स्वतंत्र अस्मिता का स्वाभिमान जगाते हैं तो मैं उसे बुरा कैसे कहूं? गलत कैसे कहूं? लेकिन मुझे अपने पूज्य गुरुदेव की धर्मकामनाओं की पूर्ति का उत्तरदायित्व निभाना है। गुरुदेव बार-बार कहते थे कि जो व्यक्ति शील, समाधि और प्रज्ञा का जीवन जीता है, वह सही माने में बुद्ध का सच्चा अनुयाई है। लेकिन कोई अपने को हजार बौद्ध कहे परंतु उसके जीवन में न शील है, न समाधि है, न प्रज्ञा है तो वह दया का ही पात्र है। उनकी इसी एक बात ने मुझे भगवान की शिक्षा की ओर आकर्षित किया था और मैं देखता हूं कि इसी बात को सुन कर भिन्न-भिन्न संप्रदायों के लोग भगवान बुद्ध की सांप्रदायिकताविहीन शुद्ध सार्वजनीन विद्या की ओर खिंचे चले आ रहे हैं।

इस मनोस्थिति के कारण कहीं-कहीं पत्रकारों द्वारा, रेडियो और टेलीविजन वालों द्वारा, मुझसे जब प्रश्न पूछे गये कि मैंने कितने लोगों को 'बौद्ध' बनाया तो मैंने उत्तर दिया – एक को भी नहीं। उन्होंने पूछा तो क्या आप स्वयं 'बौद्ध' नहीं हैं? मैंने कहा बिल्कुल नहीं। तो क्या आप 'बौद्ध धर्म' नहीं सिखाते? मैंने कहा बिल्कुल नहीं। मैंने उन्हें सही बात ठीक ढंग से समझाई कि मैं धर्म सिखाता हूं और लोगों को धार्मिक बनाता हूं। हर व्यक्ति जो धार्मिक बनता है वह बुद्ध की सिखायी हुई शील, समाधि, प्रज्ञा के आष्टांगिक मार्ग पर चलता है। केवल नाम बदल लेने से क्या होगा? मेरे ऐसे वक्तव्य जब बुद्धानुयाई देशों में पहुँचे तो वहां के बहुत से लोग नासमझी से मेरे निंदक हो गये। मेरी जन्मभूमि के प्रमुख भिक्षुओं के मन में भी मेरे बारे में भ्रांति पैदा हुई। मैं उनसे प्रत्यक्ष मिले बिना उनके संशय दूर कर भी कैसे सकता था?

लेकिन धर्म ने अपना काम किया। बर्मा के सैनिक सरकार का अध्यक्ष डॉ. मौं मौं ने मेरे धर्मदूत के कार्यों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। जब वह अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त हुआ तब अपनी बेटी से मिलने के लिए भारत आया। उसकी बेटी दिल्ली स्थित बर्मी दूतावास में सेवारत थी।

उसकी बेटी ने भी मेरे बारे में और मेरे शिविरों के बारे में बहुत-सी अच्छी बातें सुन रखी थी। उसने अपने पिता को यह सूचना दी। वह आतुर होकर मुझसे मिलने के लिए जयपुर चला आया, जहां कि मैं अगला शिविर आरंभ करने वाला था। मुझसे बातचीत के दौरान उसके मन में धर्मसंवेग जागा और वह शिविर में सम्मिलित हो गया। शिविर समाप्त होते ही वह मुझसे मिला और अत्यंत कृतज्ञता प्रकट करते हुए बोला कि मैं जीवन में पहली बार भगवान बुद्ध की शिक्षा को सही रूप में समझ पाया हूं और वस्तुतः अनुपम धर्मरस का रसास्वादन कर पाया हूं। उसने अत्यंत कृतज्ञभाव से मुझसे विदा ली। बर्मा गया। वहां के शासनाधिकारी उसे बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उसने कैबिनेट को मेरे शिविरों के बारे में सही-सही बात बतायी और कहा कि हमारे यहां के पूज्य भिक्षुओं के मन में सचमुच भ्रांतियां हैं। वे निकलनी चाहिए।

इसके कुछ समय बाद मैं आस्ट्रेलिया में ब्लैकहीथ के 'धम्मभूमि' केंद्र में शिविर लगा रहा था। शिविर का पांचवा या छठा दिन होगा। मुझे अत्यंत अप्रत्याशित ढंग से राजधानी कैनबरा से आस्ट्रेलिया स्थित बर्मी राजदूत का फोन आया। उसने अत्यंत विनम्रभाव से कहा कि बरमी सरकार मुझे राज्य अतिथि के रूप में आमंत्रित करती है। उसने आग्रह किया कि मैं शीघ्र से शीघ्र यांगों पहुँचूं। मैंने उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकृति दे दी। इस घटना से मैं स्तब्ध रह गया। आश्चर्याभिभूत हो गया, हर्षाभिभूत हो गया। नागरिकता बदलने के कारण मेरी मातृभूमि जाने पर जो प्रतिबंध लगा था और जहां जाने के लिए मेरा मानस तड़प रहा था, वहीं मुझे राज्य-सम्मान के साथ आमंत्रित किया जा रहा है। कैसी अद्भुत है धर्म की महिमा! कितनी विचित्र है धर्म की धर्मता!

मैं आस्ट्रेलिया से भारत न आकर, सीधे रंगून गया। हवाई अड्डे पर राजसम्मान के साथ मेरा स्वागत हुआ। सरकार ने मुझे सरकारी अतिथिशाला में उतारने का प्रबंध किया। मैंने इसे स्वीकार नहीं किया। क्योंकि मेरा पुत्र बनवारी (मौं श्वे) रंगून में रह रहा था। मैं उसके पास न रुक कर अन्यत्र क्यों रुकूं? सरकार के अधिकारी भी मेरी भावना को समझ कर मुझे ससम्मान मेरे पुत्र के घर ले गये। वहां आने पर राज्याधिकारियों ने

बताया कि मुझे इसलिए आमंत्रित किया गया है कि यहां प्रमुख भिक्षुओं के मन में मेरे धर्मदूत कार्य के बारे में जो संदेह है, जो भ्रांतियां हैं उन्हें मैं दूर कर सकूं। उसी समय डॉ. मौं मौं का फोन आया और उसने भी यही बात दुहराई। मेरी जन्मभूमि में आ सकने का जो हर्ष था उससे कहीं बड़ा हर्ष यह जान कर हुआ कि मैं धर्म के बारे में अपनी समझ यहां के प्रमुख धर्माचार्यों के सामने विनीतभाव से प्रस्तुत कर सकूंगा। यही हुआ। रंगून के भिक्षुओं के विश्व विद्यालय में मेरा प्रवचन रखा गया। मैंने विनम्रभाव से अपना मंतव्य प्रकट किया। उन्हें यह सुन कर आश्चर्य हुआ कि बुद्धवाणी में, अर्थकथाओं में, टीकाओं में, अनुटीकाओं में कहीं भी 'बौद्ध' शब्द का प्रयोग नहीं है। भगवान ने सब जगह अपनी शिक्षा के लिए धम्म और अपने अनुयाइयों के लिए धम्मिं, धम्मिको, धम्मट्ठो, धम्मचारी, धम्मविहारी, धम्मानुसारी जैसे शब्दों का ही प्रयोग किया है, 'बौद्ध' शब्द का नहीं। दो दिन के पश्चात भिक्षुओं ने भगवान की वाणी और तत्संबंधी साहित्य को जांच कर इस सच्चाई को स्वीकार किया। साथ-साथ यह तथ्य भी उनके खूब समझ में आ गया कि जो बुद्धानुयाई नहीं हैं उनमें से अधिकांश बुद्ध की शिक्षा को धर्म कहने से ही सुनेंगे, समझेंगे और स्वीकार करेंगे; 'बौद्ध धर्म' कहने से नहीं।

मैंने फिर एक बार देखा कि अपनी मातृभूमि से सदा के लिए विलग हो जाने वाली अप्रिय घटना धर्म के प्रभाव से किस प्रकार मेरे लिए वरदान साबित हुई! मैं धन्य हुआ! मेरी जन्मभूमि के जिन संतों ने सदियों तक भगवान की वाणी और विपश्यना विद्यारूपी उनकी प्रमुख शिक्षा को शुद्ध रूप में सुरक्षित रखा, उसी पुरातन परंपरा के वर्तमान संतों के मन में मेरे बारे में कोई भ्रांति हो, मेरे कारण उन्हें पीड़ा पहुँचे, यह मेरे लिए असह्य था। इस भ्रांति और पीड़ा को दूर करना मेरे लिए अत्यंत आवश्यक था। लेकिन स्वयं उनसे मिले बिना, यह कैसे होता? सचमुच धर्म ने मुझ पर कृपा की। मुझे ऐसा सुअवसर प्रदान किया।

इसी यात्रा में एक हर्षोत्पादक घटना और घटी। जिस दिन सायंकाल रंगून पहुँचा, उसी समय जो पहला व्यक्ति मुझसे मिलने मेरे पुत्र के घर आया वह था मेरा मित्र कर्नल मौं मौं खा, जो कि सैनिक सरकार के उद्योग मंत्रालय में एक प्रमुख अधिकारी था और उसके सत्प्रयत्नों से मुझे भारत

जाने के लिए बरमी पासपोर्ट मिला था। मैंने इस कारण उसे धन्यवाद देते हुए मेरे धर्मदूत के कार्य के बृहद् पुण्य में उसे भागीदार बनाया। आगे जा कर उसी सरकार में वह देश का प्रधानमंत्री बना। इस ओहदे पर आसीन रहने पर भी उन दिनों के सरकारी नियमों के कारण वह मेरे पासपोर्ट पर भारत के अतिरिक्त अन्य देशों की यात्रा कर सकने की मंजूरी नहीं दे सका, यद्यपि व्यक्तिगत रूप से वह बखूबी जानता था कि मेरी विश्वयात्रा में व्यापारिक और राजनीतिक उद्देश्य रंचमात्र भी नहीं था। वह विशुद्ध धर्म हेतु ही थी और उसमें देश का गौरव ही समाया हुआ था। इसे लेकर कहीं उसके मन में क्षोभ और ग्लानि न हो, इसलिए मैंने उसे आश्वासन दिया कि जो हुआ अच्छा ही हुआ। भारतीय नागरिक होकर मैं सारे विश्व में धर्मदूत का कार्य कर सकने की सहूलियत पा सका, जब कि बर्मी पासपोर्ट पर कुछ देशों की ही यात्रा कर पाता, सर्वत्र नहीं जा पाता। मैंने कहा कि धर्म जो करता है अच्छे के लिए ही करता है। भारतीय नागरिक हो जाने पर भी मैं जहां कहीं धर्म सिखाने जाता हूं, अपनी जन्मभूमि बरमी माता के गुण तो गाता ही हूं। अतः धर्मदूत के कार्य का श्रेय तो उसे है ही, साथ-साथ भारत का नागरिक होने के कारण इसका पुण्यफल भारत को भी मिलता है। यहीं तो विपश्यना रूपी सद्धर्म की उत्पत्ति हुई। वस्तुतः दोनों देशों को यह श्रेय मिलना समीचीन ही है। मेरा दूसरा मित्र ऊ ति हान अस्वस्थ था। अतः दूसरे दिन उसके घर गया। उसे अपने अर्जित पुण्य में भागीदार बनाया। विपश्यना के विश्व प्रसारण से वह अत्यंत भावविभोर था। संतुष्ट प्रसन्न था। मैं भी उससे मिल कर अत्यंत प्रसन्न हुआ। अपने अर्जित पुण्य में उसे भागीदार बना कर आह्लादित हुआ।

कृतज्ञताभरी मंगल कामनाएं

रंगून से मैं पुनः भारत लौटा और अपनी धर्म सेवा में अत्यंत प्रसन्नचित्त से लग गया। अब पुनः बार-बार अपनी जन्मभूमि जा सकने की छूट मिल गयी। भिन्न-भिन्न देशों में धर्मचारिका करते हुए उस मंगलमय धर्मदेश की कृतज्ञताभरी स्मृति सदा साथ रही, तभी कहा –

जळम मिल्यों जीं देस मँह, धरम मिल्यो जीं देस।
बाबा! कदे न भूलस्यूं, मंगल बिरमा देस॥

जिस देश में केवल मां की कोख से ही जन्म नहीं मिला, बल्कि शुद्ध धर्म रूपी विपश्यना पा कर मेरा इतना कल्याण हुआ, उस मंगलमय म्यंमा देश को भला मैं कैसे भूल सकता हूं! मन कृतज्ञता ही कृतज्ञता से ओतप्रोत होता रहा और तभी यह एक दोहा फूट पड़ा –

बाबा! भलो मनावस्यूं, जद तक तन मँह प्राण।
जळमभोम रो रिण चुकै, किरतगता रै पाण॥

सचमुच मैं अपनी जन्मभूमि का ऋणी हूं, जहां मुझे इतना अनमोल रत्न मिला। अतः जब तक इस तन में प्राण रहे, तब तक मैं उस देश का भला ही मनाता रहूंगा। उसके प्रति अपनी प्रबल कृतज्ञता ही जीवित रखूंगा। इसी के आधार पर मैं उसका ऋण चुका सकूंगा। यही भाव प्रकट करता हुआ यह एक और दोहा भी जागा –

रोम-रोम किरतग हुयो, ऋण न चुकायो जाय।
मंगल र वूं मनावतो, बाबा! यो हि उपाय॥

जहां धर्मरत्न पा कर मेरा रोम-रोम कृतज्ञ हुआ, उस जन्मभूमि के प्रति मंगल कामना करता रहूं, यही करणीय है।

इसीलिए बार-बार मंगल कामना के भाव ही प्रकट होते रहते हैं –

बाबा! जीं स्यूं सुख मिल्यो, सुखी र वै वो देस।
धरमदीप दीपत र वै, अंधकार ह्वै सेस॥

हे बाबा! जिस देश ने मुझे धर्मरत्न देकर अमित सुख प्रदान किया, वह सदा सुखी रहे! उस देश में सतत धर्मदीप प्रज्वलित रहे। वहां अज्ञान के अंधकार का नामोनिशान न रहे।

बार-बार मन में यही सद्भाव उठते कि उस देश का मंगल हो! मंगल हो!

बाबा! बिरमा देस रो, सै बिध मंगल होय।
अन धन को सुख सांति रो, सतत बधावो होय॥

हे बाबा! हर प्रकार से उस धर्मदेश का मंगल हो! वहां अन्न, धन, संपदा, समृद्धि के साथ सुख और शांति का संवर्धन होता रहे।

बाबा! बिरमा देस का, सुखी र वै सै लोग।
दूर र वै दुरभिक्ख दुख, दूर र वै सै रोग॥

इसी प्रकार मन में बार-बार ये मंगल भाव जागते कि हे बाबा! उस मंगल देश के लोग सदा सुखी रहें। उस देश से दुर्भिक्ष तथा अन्य सभी प्रकार के रोग-शोक दूर रहें!

कृतज्ञता भारत के प्रति

बाबा! मैंने अपनी जन्मभूमि और धर्मभूमि बर्मा के इतने गुण गाये, उसके प्रति असीम कृतज्ञता के भाव प्रकट किये लेकिन इससे कोई यह अर्थ न लगा ले कि भारत भूमि के प्रति मेरे मन में न श्रद्धा है न कृतज्ञता के भाव। अपनी जन्मभूमि के प्रति प्रेम होना और अपनत्व का भाव होना सहज स्वाभाविक है लेकिन अपनी कर्मभूमि भारत के प्रति श्रद्धा और कृतज्ञता रंचमात्र भी कम नहीं है। मैं खूब जानता हूं। इसी धरती पर मेरे बाबा जन्मे। उनके पहले अनेक पुरखे जन्मे। नेपाल में जन्मे हुए बोधिसत्व सिद्धार्थ गौतम को इसी धरती पर सम्यक संबोधि मिली और केवल इस एक सम्यक संबुद्ध को ही नहीं, उसके पहले जितने भी सम्यक संबुद्ध हुए, उन सब को यहीं निरंजरा नदी के किनारे सम्यक संबोधि प्राप्त हुई। इस धरती पर कितने संत हुए, कितने अरहंत हुए, कितने ऋषि हुए, कितने मुनि हुए, कितने त्यागी हुए, कितने धर्मनिष्ठ हुए, कितने वीतराग हुए, वीतद्वेष हुए, वीतमोह हुए, स्थितप्रज्ञ हुए, कितने महापुरुष हुए इनकी कोई गिनती नहीं।

सम्यक संबुद्ध बनने की पहली रात बोधिसत्व सिद्धार्थ गौतम को स्वप्न में इस संपूर्ण देश की भौगोलिक सीमाओं के दर्शन हुए। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में तीन सागरों के संगम तक, पूर्व में बंग सागर से लेकर पश्चिम में सिंध सागर तक। महासमयसुत्त द्वारा उन्होंने इस संपूर्ण धरती का धर्म प्रक्षालन किया, इसे पावन और पवित्र बनाया। आज भी बुद्धानुयाई देशों के लाखों लोग इस धरती को तीर्थ भूमि मान कर पूजते हैं। प्रभूत भक्तिभाव से इसकी यात्रा करते हैं और इसकी रज अपने सिर पर, अपने माथे पर लगाते हैं। हृदय से इसका सम्मान करते हैं। मुझे भगवान बुद्ध की शिक्षा से नया जीवन मिला। मेरे हृदय में स्वभावतः इस पुरातन पावन धरती के प्रति असीम श्रद्धा है। जैसे मैंने अपनी अनेक कविताओं में बरमी माता के गुण गाये हैं, ठीक वैसे ही भारतमाता के भी गुण गाये हैं। अपने पूज्य गुरुदेव की आज्ञा शिरोधार्य करके मैं इस देश में एक बर्मी नागरिक के रूप

में आया। यहां की सरकार ने मुझे रहने के लिए वीसा दिया और बार-बार इसकी अवधि बढ़ायी। मैं यहां खुलेआम लोगों में सद्धर्ममयी विपश्यना का प्रचार-प्रसार करता रहा। सरकार ने कोई बाधा उपस्थित नहीं की। मुझे खुली छूट दी। इसे याद करते ही कृतज्ञता के भावों को व्यक्त करता हुआ एक दूहा निकला –

बिरधापन मँह सरण दी, भारत उजळो देस।
धरमदूत की छूट दी, फळै फुलै यो देस॥

जीवन के मध्याह्न के बाद यहां जो दिन बीते और बीत रहे हैं, उनके लिए मैं पुरुखों के इस पुरातन देश का आभारी हूं। इसने मुझे यहां शरण दी और धर्मदूत के कार्य की पूरी छूट दी। इसीलिए मंगल कामना करता हूं कि यह देश भी खूब फले, खूब फूले। सुख व समृद्धि का उपभोग करे। जैसे बर्मा देश के लोगों के लिए मंगल कामना करता हूं वैसे ही इस देश के लोगों के लिए भी। इसीलिए कहता हूं –

बरमा-भारत देस का, होवे लोग निरोग।
बाबा! मेरे पुण्य का, फल भोगे सै लोग॥

जैसे बर्मा वैसे ही भारत के लोग भी निरामय हों, सुखी हों, मेरे धर्मदूत के कार्य का जो पुण्य है उसमें ये सब भागीदार हों। इस पुण्य का सुखद फल यहां के सभी लोगों को मिले।

उत्तुंग हिमगिरि अपने एक छोर से गंगा को और दूसरे छोर से इरावदी को विशाल हिमखंडों का विपुल पावन जल उदारतापूर्वक प्रदान करता रहता है। इससे दोनों महानदियां दोनों पड़ौसी देशों को सींचती हुई बंग सागर में समाहित होकर एक दूसरे से घुलमिल जाती हैं। इस स्नेहमिलन से बंग सागर हर्षोल्लास से भर उठता है। उसकी यह हृदय-उमंगें उच्छल तरंगों के रूप में उद्वेलित होती रहती हैं। तभी कहा –

ऊंची लहर्यां ऊछलै, बाबा! समदर बंग।
उत गंगा इत रावती, हिलमिल भरै उमंग॥

बरमी माता और भारत माता का यह स्नेह-सम्मिलिन सुदूर अतीत से चला आ रहा है। यह चिरकाल तक यों ही उर्मिल होता रहे।

भारत और बर्मा के मैत्री-संबंधों का माधुर्य न जाने कितना पुराना है! मेरी यही हार्दिक कामना रहती है कि ये संबंध दृढ़ से दृढ़तर होते जायँ। इस स्नेह-संबंध की सुगंध खूब महके। तभी कहा –

भारत-बिरमा देस रो, सदियां रो संबंध।
सदा महकतो ही र वै, बाबा! यो मकरंद॥

और दोनों देशों का यह पारस्परिक हार्दिक मेल-मिलाप बढ़ता रहे, दोनों के लिए अत्यंत सुखद साबित हो। तभी कहा –

भारत बिरमा देस को, बढ़ज्या मेल-मिलाप।
दोनूं ही सुख स्यूं र वै, बाबा! धर्म प्रताप॥

धर्म के प्रताप से दोनों देश के लोग अत्यंत सुख, शांति का उपभोग करें। बार-बार यह मंगल कामना जागती है कि गंगा और इरावदी में जो नीर बहता है उसमें धर्म समा जाय! इसके कारण जनमन के दुख मिटें! सब की भवपीड़ा दूर हो! तभी कहा –

गंगा और इरावदी, बवै धरम रो नीर।
बाबा! जनमन दुख मिटै, दूर हुवै भवपीड़॥

और कहा –

निरमल गंगा धरम की, सतत प्रवाहित होय!
बाबा! सैं को हो भलो, सैं को मंगल होय!!

हे बाबा! दोनों देशों में शुद्ध धर्म की गंगा प्रवाहमान होती रहे और इससे सब का भला हो! सब का मंगल हो! सब का कल्याण हो!

इन्हीं मंगल कामनाओं से हृदय सरोवर सदा छलछलाता रहता है, सदा तरंगित रहता है – सबका मंगल हो! सबका मंगल हो! सबका मंगल हो!!

धन्यता

विश्व धर्मचारिका का सुअवसर प्राप्त कर मैं धन्य हुआ! मेरे गुरुदेव धन्य हुए! मेरी पावन जन्मभूमि म्यंमा धन्य हुई! मेरे पुरखों का देश भारत धन्य हुआ! इस कल्याणी विद्या को प्राप्त कर सारा विश्व धन्य हो रहा है। यह सब कुछ बाबा! तेरे ही कारण हुआ। धन्य बाबा!

बाबा-प्रणाम!

("विपश्यना" पत्रिका, २५ मार्च ८६)

"मूल के मुकाबले ब्याज ज्यादा प्रिय लगता है।" इस कहावत के आधार पर यह मान्यता है, और सही ही है कि दादा को अपने बेटे के मुकाबले पोता ज्यादा प्रिय लगता है। शायद इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप पोते को अपने पिता के मुकाबले दादा अधिक प्रिय लगता है।

उनकी कुछ बातों ने मेरे बाल-हृदय पर बड़ा गहरा असर डाला। वह मुझे जीवन भर प्रभावित करती रहीं। बाबा के मन में ब्रह्मदेश और ब्रह्मदेशवासियों के प्रति बड़ा स्नेह था जिसे कि वे अक्सर व्यक्त करते थे। उनसे सुनी हुई कुछ एक घटनाओं का वर्णन आज भी तरोताजा है।

एक घटना वे अक्सर सुनाया करते थे। उनका व्यापार कपड़े का था। किराये के घोड़ों या खच्चरों पर अपना माल लाद कर वे बहुधा पूर्वी म्यंमा के पहाड़ी-पठारी इलाकों में बेचने जाते थे। शान जाति के उस प्रदेश में उन दिनों साप्ताहिक हाट-बाजार लगा करते थे। अलग-अलग स्थानों की हाटें सप्ताह के अलग अलग दिन लगती थीं ताकि व्यापारी एक हाट पर अपना माल बेच कर थोड़ी-सी यात्रा द्वारा दूसरे या तीसरे दिन किसी अन्य स्थान पर लगी हाट तक पहुँच सके। यों कई दिनों की यात्रा करके अलग-अलग हाटों पर अपना माल बेच कर वे मांडले लौट आते थे। इस यात्रा के दौरान जहां रात्रि-पड़ाव डालना पड़ता, वहां गांव वालों की ओर से खुली धर्मशालाएं बनी रहती थीं। इसका प्रचलन कहीं-कहीं आजकल भी है। धरती से दो-तीन हाथ ऊंचे खंभों पर बना लकड़ी का एक बड़ा-सा मंच जो ऊपर से छाया हुआ, पर चारों ओर से खुला। कोई दीवार नहीं। उसे बरमी भाषा में "जया" कहते हैं, उसी पर यात्री अपना सामान रख कर रात को आराम से सोते और सुबह आगे की यात्रा पर निकल पड़ते। इसका कोई किराया नहीं लिया जाता, बल्कि गांव वाले सेवाभाव से इसे झाड़-बुहार कर साफ रखते और समीप ही पानी का प्रबंध भी कर देते।

बाबा ने बताया, उन दिनों लेन-देन में चांदी के रोकड़ी रुपए ही चलते थे। बाबा इन रुपयों को एक नोली [कपड़े की संकड़ी लंबी थैली] में भर कर उसे कमर में बांध कर यात्रा करते थे। रात को थैली कमर से खोलकर सिरहाने तकिए के नीचे रखकर सोते थे। एक दिन सुबह सूर्योदय के पूर्व जल्दी उठ कर चलना था। उठने में जरा देर हुई तो हड़बड़ा कर जल्दी-जल्दी घोड़ों पर सामान लाद कर यात्रा पर निकल पड़े। पाँच-छह घंटे की यात्रा पूरी करने के बाद होश आया कि रुपयों की नोली तो जया पर ही छूट गयी। चिंता हुई, घोड़े वालों से वापस चलने के लिए कहा, पर उन्होंने स्वीकार नहीं किया। उन्होंने जोर देकर कहा कि अगली हाट की दुकानदारी पूरी करके ही लौटें। थैली सही सलामत मिल जायगी। बाबा को चिंता थी पर घोड़े वालों की बात माननी पड़ी। चार-पांच दिन बाद लौटे तो मन में धड़कन थी कि इस बार की कमाई गयी सो तो गयी, मूल में भी घाटा होगा । नोली रुपयों से भरी थी। पर वापस पहुँचे तो अत्यंत सुखद आश्चर्य हुआ । देखा कि उस खुले मंच पर रुपयों की नोली ज्यों की त्यों पड़ी है। गिन कर देखा तो रुपए पूरे। एक भी कम नहीं। किसी ने उसे छुआ तक नहीं । न गांव वालों ने और न सैकड़ों की संख्या में यात्रा करने वाले राहगीरों ने, जो कि रात बिताने के लिए उस जया पर सोए होंगे। बाबा कहा करते थे कि इस देश के लोग बड़े ईमानदार हैं। यहां चोरियां नहीं होतीं।

एक घटना और सुनाते थे। मांडले शहर के बाजार में किसी दूकान के सामने फुटपाथ पर किसी महिला के कान की हीरे की लौंग [लडाऊं] असावधानीवश गिर पड़ी। लोग उसे देखते, पर कोई उठाता नहीं। सुबह झाडू देने वाली आती, वह भी उसे उठा कर झाडू लगा देती और फिर उसे उसी स्थान पर रख देती। सात दिन बाद राज्य का एक अधिकारी उसे उठा ले गया और नगरी में डूंडी पिटवा दी गयी कि किसी महिला का लडाऊं खो गया हो तो उसे पहचान कर सरकार से ले जाय। ऐसे ईमानदार लोग हुआ करते थे बरमा के।

उन्होंने बताया कि उन दिनों घरों में ताले नहीं लगते थे। ताले लगाने की प्रथा ही नहीं थी। केवल कुत्ते, बिल्ली, गाय, बैल आदि पशुओं को दूर रखने के लिए दरवाजे पर सिटकनी होती थी, पर ताले नहीं। धनी से धनी

नागरिक के घर पर भी ताले नहीं होते थे। बरमी नरेश के राज्य में यही प्रचलन था। अंग्रेजी राज्य में अनेक विदेशी आ बसे और धीरे-धीरे सामाजिक व्यवस्था बिगड़ने लगी तो चोरियां होने लगीं, ताले लगाए जाने लगे। ताले तोड़कर भी चोरियां होने लगीं।

म्यंमा के नरेश मिन डो मिन के शासनकाल में ही बाबा तत्कालीन म्यंमा की राजधानी मांडले में बस गये थे अथवा इसके कुछ काल पश्चात, यह निश्चित रूप से नहीं मालूम। परंतु अंतिम नरेश तीबो के शासनकाल में अवश्य मांडले में ही बसे हुए थे। उसे वे फुंगी [फौंजी] याने भिक्षु नरेश कहते थे। पता नहीं क्यों? राजगद्दी पर बैठने के पूर्व कई वर्षों भिक्षु रहा इसलिए अथवा धार्मिक प्रवृत्ति का था इसलिए। वैसे अंग्रेजी इतिहासकारों ने इस नरेश की बड़ी बुरी छबि प्रस्तुत की है। परंतु इसका कारण राजनैतिक हो सकता है। राजा वस्तुतः भला रहा होगा। बाबा की नजरों में तो भला था ही। उन्होंने उसके राज्य खोने और अंग्रेजों द्वारा बंदी बना कर किले से नदी-तट तक ले जाने का हृदय-विदारक दृष्य आंखों-देखा था और उसकी चर्चा बड़े दुखी मन से किया करते थे। म्यंमा की स्वाधीनता खोए जाने का उन्हें दुःख था। अंग्रेजी शासन को वे भारत और म्यंमा दोनों के लिए दुर्भाग्यजनक मानते थे।

म्यंमा-नरेश के प्रति उनके मन में बड़ी श्रद्धा थी। उनके कथनानुसार बर्मी नरेश और बर्मी राज्य-अधिकारियों के मन में भारतीय व्यापारियों के प्रति बहुत स्नेह और आदर था जो अंग्रेज आदि अन्य विदेशी व्यापारियों के लिए ईर्ष्या का कारण बन गया था। जब दक्षिण म्यंमा से व्यापारी मांडले तट पर माल लाते तो उस पर चुंगी ली जाती थी। भारतीय व्यापारी से अधिकारी बड़ी नम्रता से पेश आते। पूछते क्या सामान लाया है? उसकी पेटियां कभी खोल कर नहीं देखते। उस पर पूरा-पूरा विश्वास करके उसके बयान के अनुसार चुंगी लगा देते। परंतु औरों की पूरी छान-बीन करते थे। यह स्थिति बहुत वर्षों तक चली। लेकिन बाद में कुछ एक भारतीय व्यापारियों ने झूठ बोल कर सरकार को धोखा देना शुरू किया। विश्वासघात किया। कीमती मखमल से भरी पेटी पर दो-चार हल्के मारकीन के थान जचा कर कम चुंगी देकर सरकार को ठगने लगे। अंततः पोल खुली और कुछ लोगों की बेईमानी

के कारण सभी भारतीय व्यापारियों ने अपनी साख खो दी। एक-दो सड़ी गली मछलियां सारे तालाब को गंदा कर देती हैं। दो-एक बूंद काजी सौ मन दूध फाड़ देती है।

बाबा बताते थे कि प्राचीन म्यंमा में "कुल" [कला] शब्द भारतीयों के लिए बड़े सम्मान से प्रयोग किया जाता था। [पालि वाङ्मय के "महाकुल" अनाथपिंडिक, "महाकुल" विशाखा की भांति] परंतु थोड़े वर्षों में इन भ्रष्ट व्यापारियों की वजह से यह शब्द अत्यंत घृणासूचक संबोधन बन गया। व्यापारी ईमानदारी खोकर अपनी साख खो देता है। साख खो देता है तो सब कुछ खो देता है। बाबा ईमानदारी को ही व्यवसाय की उन्नति का मुख्य आधार मानते थे। ईमानदारी को ही समृद्धि और सुख-शांति का मूल मानते थे। यद्यपि मेरे देखते वह व्यापार से कब के निवृत्त हो चुके थे, पर इस दिशा में उनके विचार सुनने को मिलते थे और उसका असर सब पर होता था। वे ग्राहक को अन्नदाता कहते थे और उसे धोखा देना बड़ा दोष मानते थे। उनका यह सिद्धांत घर में सभी मानते थे। मेरे एक ताऊजी तो इसे अतियों की सीमा तक पालते थे।

बाबा की और भी कई बातों का जीवन में गहरा असर हुआ। उन्हें अखबार का बहुत शौक था पर आंख ठीक न होने के कारण रोज मुझसे पढ़वा कर सुनते थे। भारत और म्यंमा की राजनीति में बहुत रस लेते थे। इसका असर मेरे मन पर भी खूब पड़ा। रोज अखबार पढ़ना जैसे एक व्यसन बन गया।

बाबा का साहित्य प्रेम अनूठा था। लोक साहित्य का भंडार भरा था उनके स्मरण-कोश में। न जाने कितनी लोक-कथाएं सुनाया करते थे। उनके राजस्थानी दोहों का मन पर गहरा असर पड़ा। सौभाग्य से मेरी पाठशाला के अध्यापक श्री कल्याणदत्त दूबे भी कवि और काव्यप्रेमी थे। हिंदी भाषा का सामान्य ज्ञान करा कर मेरी हिंदी की पुस्तकीय पढ़ाई उन्होंने 'रहिमन सुधा' से शुरू करायी जो कि रहीम के दोहों का एक संग्रह है। परिणाम यह हुआ कि ७-८ वर्ष की उम्र में ही पहला दोहा रच कर मैंने बाबा को सुनाया तो वे बड़े प्रसन्न हुए और फिर बहुत जोरों से खिलखिला कर हँसे भी। उनके हँसने का कारण बहुत दिनों बाद समझ में आया। हुआ यह कि जो पहला दोहा

बनाया उसमें मैंने 'रहिमन' शब्द जोड़ दिया था। स्कूल में रहिमन सुधा के दोहे पढ़ता था तो उसमें 'रहिमन' अथवा 'रहीम' शब्द हर दोहों में जुड़ा हुआ पाता था तो इनमें से किसी एक को जोड़ना अनिवार्य समझ बैठा था। यह तो बाद में पता चला कि बाबा इसी बात पर हँसे थे। उन्हें क्या पता था कि यही अबोध बालक वर्षों बाद अपने बाबा की याद में दोहों का एक ऐसा संग्रह तैयार करेगा जिसके हर दोहे में "बाबा" शब्द जुड़ा होगा।

मांडले नगर से लगभग दस मील दूर टगुंडाई गांव में एक गऊशाला थी। हर वर्ष गोपाष्टमी पर वहां एक मेला लगता था। बाबा हम सब बच्चों को उस मेले में ले जाते और हम वहां बालसुलभ चपलता का पूरा लाभ उठाते। वहीं शाम को एक सार्वजनिक सभा होती जिसमें अनेक लोगों के भाषण होते। बाबा उसमें बहुत रस लेते। एक बार मास्टर दूबे जी ने मेरे लिए ७-८ पन्ने का एक भाषण तैयार करके इस मेले में पढ़ कर सुनाने का प्रबंध किया। बाबा को पता चला तो उन्होंने कहा कि पढ़ कर सुनाना प्रभावशाली नहीं होता। कंठस्थ याद करके सुनाना चाहिए। बस धुन लग गयी। कुछ दिनों की तैयारी में ही कंठस्थ कर लिया और मेले की सभा में उसे बिना पढ़े ही सुनाया। बाबा बहुत खुश हुए। लगा कि भविष्य के लिए ट्रेनिंग दे रहे थे।

घर में सभी लोग दोपहर का भोजन १२-१ बजे और रात का ७-८ बजे करते थे। पर बाबा को बर्मियों की भोजन समय-सारिणी बहुत प्रिय थी। वे नित्य नियमित दोपहर का भोजन सुबह १० बजे और रात्रि का भोजन शाम को ५ बजे ही लेते थे। भोजन बनाने वाली उनकी बहुएं उनके मनमुताविक समय पर भोजन बना कर उन्हें परोसती थीं। देखता हूं कि शिविरों में भोजन की यही समय-सारिणी कितनी स्वास्थ्य-वर्धक रहती है। घर पर कभी देर से रात्रि-भोजन करता हूं तो स्वास्थ्य की कितनी हानि होती है।

बाबा को कभी पूजा-पाठ या भजन-कीर्तन करते नहीं देखा। व्रत, उपवास या पठन-पाठन करते नहीं देखा। नगर में एक सत्यनारायण मंदिर था परंतु उन्हें वहां भी जाते नहीं देखा। यहां तक कि कृष्णाष्टमी पर जब वहां हिंडोलों की सजधज होती, धूमधाम से त्यौहार मनता तब भी उसे देखने नहीं जाते। बाबा की एक बेटी थी, हमारी भूआ चांदाबाई जो कि बालविधवा और निःसंतान थी। वह पीहर ही रहती थी। हम बच्चों को तो

वह बहुत प्यार करती थी परंतु कभी कभी बाबा पर किसी बात पर खफा हो जाती तो बड़े जोरों से उलाहना देती थी, “बापू! तुम्हारे लिए न राम न रैम, न माळा न मणका, न तीरथ न बरत। उमर यूं ही खो दोगे तुम तो।”

परंतु बाबा मुस्करा कर उसकी बात टाल देते। उसी बाबा को हमने देखा कि बहुधा हम बच्चों को साथ लेकर मांडले से ४-५ मील दूर भगवान महामुनि बुद्ध के मंदिर में जाते और वहां कुछ देर चुपचाप बैठे रहते। मैं नहीं जानता कि कोई ध्यान करते या ऐसे ही बैठे रहते थे। हमारे यहां मंदिरों में इतनी गंदगी और इतना हल्ला-गुल्ला, शोर-शराबा होता है कि सफाई और शांति खोजे नहीं मिलती। परंतु जब बाबा-संग महामुनि मंदिर में जाता तो वहां स्वच्छता ही स्वच्छता, शांति ही शांति मिलती थी। बड़ा प्रसन्न होता था वहां जाकर।

बाबा कभी-कभी बच्चों को मांडले के किले में बर्मी राजा का पुराना महल दिखाने ले जाते थे। महल के दरबार, सभागृह, रनिवास आदि का परिचय बड़े विवरण के साथ देते। इसके बाद महल से थोड़ी दूर पर उगे हुए एक पीपल के पेड़ तले अवश्य जाते। वहां कुछ देर विश्राम के लिए बैठते। मुझे याद है वहां भी महामुनि पगोडा की-सी शांति महसूस होती। उस पीपल की छाया का आकर्षण इतना बढ़ा कि मैट्रिक की परीक्षा के पूर्व दस दिन के लिए पढ़ाई की जो छुट्टी मिली वह मैंने वहीं बितायी। रोज सुबह अपनी साइकिल पर, भोजन और पुस्तकें साथ लेकर घर से दूर किले के भीतर उस पीपल के पेड़ तक चला जाता और उसके नीचे पढ़ने बैठता और शाम को ही घर लौटता । इसका बड़ा शांतिपूर्ण प्रभाव पड़ा मन पर।

यों बाल्यावस्था में ही बाबा ने साहित्य-प्रेम और शुद्ध धरम के जो बीज मानस में बोए वे कालांतर में खूब फले-फूले।

बाबा के म्यंमा बस जाने के कारण ही उस मंगल देश में मेरा जन्म हुआ । व्यापारी के घर जन्मा, अतः धन-संपदा तो कहीं भी कमा लेता। परंतु उस देश में गृहस्थ संत गुरुदेव ऊ बा खिन से संपर्क हुआ और शुद्ध धर्म का अनमोल रतन कमाया, जिसने मुझे सदा के लिए धनकुबेर बना दिया। बाबा ऐसे परम उपकारी थे मेरे। उनकी पावन स्मृति में उन्हें शत-शत प्रणाम।

एक दशक पूरा हुआ

(“विपश्यना” पत्रिका, ९ जुलाई ७९)

२० जून, १९६९ के दिन परम पूज्य गुरूदेव ऊ बा खिनजी ने विपश्यना के आचार्य पद पर प्रतिष्ठापित कर एक बड़ी जिम्मेदारी का काम मेरे सिर पर दिया। कुछ एक दिन बाद ही ब्रह्मदेश से भारत के लिये प्रस्थान था। स्वर्ग-सी गरिमामयी जन्मभूमि छोड़ कर अनेकानेक बुद्धों की, ज्ञानियों की, संतों की और अपने पूर्वजों की इस परम पावन धर्मभूमि को अपने भावी जीवन की कर्म-भूमि बनाने का पुनीत प्रसंग था, सुखद संयोग था।

गुरुदेव की बहुत बड़ी कल्याणकामना थी कि ब्रह्मदेश भारत का ऋण अदा करे। तेईस शताब्दियों पूर्व जो कल्याणी विपश्यना विद्या ब्रह्मदेश को उपलब्ध हुई थी, उसे विनीतभाव से वापस स्वदेश पहुँचाना-यही ऋण-अदायगी थी।

इस महत्त्वपूर्ण कार्य को वे स्वयं पूरा किया चाहते थे, पर कई प्रतिबंधों के कारण कर नहीं पा रहे थे। अतः मुझ से करवाया चाहते थे। उपयुक्त समय की प्रतीक्षा थी। संयोग ऐसा हुआ कि बर्मी नागरिक होते हुए भी, भारत गयी हुई बृद्धा जननी की रुग्णावस्था के कारण मेरा भारत आने का प्रसंग बना। बर्मी सरकार ने प्रस्थान की और भारत सरकार ने प्रवेश की अनुमति प्रदान की। [दोनों सरकारों का अत्यंत आभारी हूं।] भारत आने की सुविधा प्राप्त हुई। गुरुदेव अत्यंत प्रसन्न हुए। अपनी चिर संचित धर्मकामना पूरी करने की जिम्मेदारी उन्होंने मुझे सौंपी। अपनी कमियों को जानते हुए भी जिम्मेदारी स्वीकारनी ही थी। मुझे भी गुरु-ऋण से मुक्त होना था। जिन करुण संतने यह कल्याणकारी विद्या सिखा कर मेरे लिये अविद्यारूपी अंडे का खोल तुड़वाया और अंतर्चेतना का आत्मबोध करवा कर एक नया जन्म दिया और केवल जन्म ही नहीं दिया, चौदह वर्षों तक असीम वात्सल्य भाव

से मुझे इस विद्या में पोषित किया, उनके इस महान ऋण से यत्किंचित भी उऋण होने के लिए बड़ी से बड़ी जिम्मेदारी उठानी ही थी।

सचमुच जिम्मेदारी बड़ी थी। अर्वाचीन भारत में भगवान गौतम बुद्ध के प्रति अत्यंत श्रद्धा और गौरव का भाव होते हुए भी अनेक लोगों के मन में उनके प्रशिक्षण के प्रति कितनी गहरी भ्रांतियां हैं! कितना गहरा विरोध है! लगभग बीस सदियों की भ्रांतियां, बीस सदियोंका विरोध। किसी को क्या दोष दूं? मैं स्वयं भी कभी इन्हीं भ्रांतियों का शिकार था। इसी विरोध में शामिल था। गुरुदेव की कृपा से सद्धर्म का व्यावहारिक पक्ष सीखने को मिला तभी सारी भ्रांतियां दूर हुईं, सारा विरोध विलीन हुआ। यही व्यावहारिक पक्ष अब अनेक लोगों की भ्रांतियां और विरोध दूर कर सका है और कर रहा है। धर्म का सांप्रदायिकता-विहीन शुद्ध मंगलकारी स्वरूप प्रकाश में आ रहा है।

भगवान बुद्ध ने धर्म का शुद्ध स्वरूप प्रकाशित किया। शील, समाधि और प्रज्ञा का सार्वजनीन व्यावहारिक उपदेश दिया। कोई भी बोधि प्राप्त महापुरुष यही करता है। कोरी दर्शनिक मान्यताओं और विवादों के लिए धर्म नहीं होता। संप्रदाय संस्थापन के लिए भी धर्म नहीं होता। धर्म आत्मकल्याण और जनकल्याण के लिए होता है। सद्धर्म के इस सर्वजन हितकारी स्वरूप ने ही मुझे अपनी ओर आकर्षित किया था और यही अनेक समझदार लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर सका है, कर रहा है। "अहो बुद्ध! अहो धम्म! अहो धम्मसुधम्मता!" धन्य हैं बुद्ध जो सार्वजनीन धर्म का उपदेश देते हैं। धन्य है धर्म जो सार्वजनीन हितकारी होता है। धन्य है धर्म की सुधर्मता जिसके कारण उसे कोई भी सामान्य व्यक्ति धारण कर लाभान्वित हो सकता है। आभारी हूं ऐसे संप्रदाय-निरपेक्ष धर्म का जो मन में रंचमात्र भी सांप्रदायिक संकीर्णता नहीं जगने देता। इसी धर्म-बल पर विपश्यना लोकसेवा का माध्यम बन सकी है। यद्यपि प्रारंभिक कठिनाइयां तो थीं ही।

एक बड़ी कठिनाई यह भी थी कि उन दिनों लगभग ६० करोड़ की जन-संख्या वाले इस देश में कुल मिला कर १०० व्यक्ति भी मेरे परिचित नहीं थे। और जिन्हें घनिष्ट कह सकूं उनकी संख्या तो अंगुलियों के पोरों पर

गिनी जा सके। सबसे घनिष्ट तो अपने ही परिवार के भारतवासी सदस्य थे। परंतु ऐसा संयोग हुआ कि उन्हें एक सर्वथा विपरीत साधना प्रणाली में दृढ़तापूर्वक प्रतिष्ठित पाया। भारत पहुँचते ही परिवार के जिस माहौल का सामना करना पड़ा, उससे तो यही लगा कि उनकी ओर से किंचित मात्र भी सहयोग की आशा करना व्यर्थ है। परंतु फिर भी सहयोग मिला ही, जिसे भुला नहीं सकता। उनका आभार मानता हूं। अपने इस प्रभूत पुण्यकार्य में उन्हें भागीदार मानता हूं।

पिछले दस वर्षों में यह जो हजारों की संख्या में देश-विदेश के लोग संपर्क में आये वह वस्तुतः धर्म के बल पर ही आए। कितने अपरिचित अजनबी लोग धर्म के क्षेत्र में चिर-परिचित साबित हुए। इनमें से अनेक तो ऐसे थे जो अपने किसी पूर्व पुण्य के परिणाम स्वरूप धर्म का बीज मात्र लेने आए, जो कि उन्हें समय पकने पर कल्याणकारी फल देगा। मैं उन सब का अत्यंत आभार मानता हूं। उन्होंने मुझे धर्मदान दे सकने का और गुरु-ऋण से किंचित मात्र भी उऋण हो सकने का सुअवसर प्रदान किया।

परंतु धर्म के संपर्क में ऐसे लोग भी आए जो कि सहज भाव से इस कल्याणकारी आंदोलन के अंग बन गए। कितनी महती सेवा की इन लोगों ने। पिछले दस वर्षों के व्यस्त जीवन का पुनरावलोकन करता हूं तो ऐसे कितने चेहरे सामने आते हैं जो कि विपश्यना के शिविर लगाने में तन, मन, धन से पूर्णतया संलग्न हो गए। यह उन प्रारंभिक दिनों की बात है जब कि विपश्यना का अभ्यास तो दूर, यह शब्द भी लोगों के लिए अनसुना, अनजाना था। उन दिनों विपश्यना प्रशिक्षण के लिए एक भी केंद्र नहीं बना था। शिविर व्यवस्थापक को किसी धर्मशाला अथवा स्कूल-भवन का इंतजाम करना पड़ता था। दस दिनों तक साधकों के निवास व भोजन का समुचित प्रबंध करना पड़ता था। कोई बीमार हो तो उसकी यथोचित चिकित्सा व पथ्य-परहेज का प्रबंध करना पड़ता था। शिविर के दौरान दस दिनों तक वह अपना काम-धंधा छोड़ कर साधकों की बराती सेवा-चाकरी करता ही, पर उसके पूर्व भी बुकिंग के लिए अनेक दिनों तक पत्राचार में लगा रहता। और फिर शिविर के बाद भी उखड़ते मेले की जिम्मेदारी का भार। जो भी बर्तन-भांडे, शैय्या-बिस्तर एकत्र किए उनका भाड़ा देना, उन्हें

यथास्थान वापस पहुँचाना। स्थान-स्थान से आए हुए साधकों को वापस घर लौटने के लिए रेल्वे बुकिंग आदि का प्रबंध करना। यों छोटे-बड़े बीसियों काम व्यवस्थापक के सिर पड़ते थे। और यह सब कुछ अत्यंत प्रसन्न चित्त से विशुद्ध सेवाभाव से होता। कहीं कोई लाभ का लोभ नहीं, यश की कामना नहीं। स्वयं धर्मरस चखा है। अतः चाहता है कि अधिक से अधिक लोग धर्मरस चखें। स्वयं धर्मसाधना से लाभान्वित हुआ है। अतः चाहता है कि अधिक से अधिक लोग लाभान्वित हों।

ऐसे अनेक सेवाभावी व्यवस्थापकों के चेहरे याद करता हूं तो मन कृतज्ञता-विभोर हो पुलक-रोमांच से भर-भर उठता है। इतने अल्पकाल में जो भी काम हुआ क्या वह इन निःस्वार्थ सेवकों की धर्मसेवा के बिना संभव हो सकता था?

इन्हीं सेवाभावियों में से कुछ एक ने पूज्य गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन की पावन स्मृति में इगतपुरी में "विपश्यना विश्व विद्यापीठ" की स्थापना की, हैदराबाद में "अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना साधना केंद्र" की और जयपुर में "विपश्यना केंद्र" की। इन साधना केन्द्रों के निर्माण में कितने विपश्यी साधकों ने सहयोग दिया और दे ही रहे हैं; उन्हें इस सहयोग के बदले में कुछ भी पाने की स्वार्थभावना नहीं। विशुद्ध सेवाभाव ही सेवाभाव। जिन्होंने दान भी दिया तो कहीं नाम की आकांक्षा नहीं, किसी विशिष्ट सहूलियत की कामना नहीं। सेवा भी की तो कोई पद की भूख नहीं, प्रतिष्ठा की प्यास नहीं। आभारी हूं इन सभी सेवार्थियों का।

यह धर्मसेवा केवल भारतीय साधकों तक सीमित नहीं रही। अनेक विदेशी युवक-युवतियों ने धर्मसेवा के लिए अपना जीवनदान दिया है। कई लोग धम्मगिरि पर संन्यासी की तरह सेवा करते हैं। आवश्यक हो तो एक सामान्य मजदूर की तरह पसीना बहा कर श्रमदान देते हैं। इनकी सेवा की लगन देख कर अनेकों के मन पुलकित होते हैं और उन्हें धर्मप्रेरणा मिलती है। भारत में ही नहीं, बाहर विदेशों में भी अनेक लोग सेवारत हैं। अनेक देशों में विपश्यना के संपर्क स्थान स्थापित किए गए हैं। जहां नियमितरूप से साप्ताहिक विपश्यना साधना होती है। समय-समय पर विपश्यना-शिविर का आयोजन किया जाता है। यह अनेकानेक देशी और विदेशी साधक

धन्यवाद के पात्र हैं। यद्यपि जानता हूं कि इन्हें धन्यवाद की किंचित भी भूख नहीं है।

पिछले दस वर्षों में कितने ही शिविर बौद्ध विहारों में, जैन उपाश्रयों में, हिंदू मंदिरों में, मुस्लिम मस्जिद में और ईसाई गिरजाघर में लगे। यह उन-उन धर्मस्थानों के नेताओं की महानुभावता के कारण ही हो सका। उनमें जरा भी सांप्रदायिक संकीर्णता होती तो वे अपने-अपने धर्मस्थानों में विपश्यना के शिविर लगने की अनुमति भला कैसे देते? विशेष कर ऐसी अवस्था में जबकि किसी द्वेषभाव से नहीं, बल्कि साधना की निर्विघ्न निरंतरता बनाये रखने की अनिवार्य आवश्यकता के कारण विपश्यना शिविरों के दौरान उनके अपने सभी दैनिक कर्मकांड, विधि-विधान, मंत्रादि बंद करा दिए जाते थे। खंडाला के सेंट मेरी गिरजाधर के मुख्य प्रार्थना-प्रकोष्ठ में शिविर लगा और शिविर के दौरान दो रविवार आए। नित्यप्रति के पूजापाठ प्रार्थना आदि की बात तो दूर, इन दोनों रविवारों को उनके साप्ताहिक सामूहिक धर्म प्रवचन तक बंद रहे। निंगाल [कच्छ] की मस्जिद में दो शिविर लगे, जिसमें कि दो या तीन शुक्रवार आए। रोज की अजान बंद रही सो तो रही ही, परंतु जुम्मे की सामूहिक नमाज भी विपश्यना वालों के खातिर बंद रखी गई। फिरके परस्ती का जरा भी तंग नजरिया नहीं। उदार चेतना ही उदार चेतना। सर्वथा प्रशंसनीय है ऐसी उदार चेतना, जिसकी वजह से मंदिरों में घंटे घड़ियाल नहीं बजे, गिरजाघरों में सामूहिक प्रार्थनाएं नहीं हुईं, मस्जिद में अजान और नमाज नहीं पढ़ी गई ताकि विपश्यना का साधक शांत वातावरण में अंतर्मुखी होकर अपने भीतर की गांठें खोल सकने की विद्या सीख सकें।

धन्य है यह भारत-भूमि। यहां पिछले दस वर्षो में कितने गृहत्यागियों ने अपने अहंभाव को त्याग कर, प्रतिष्ठा के भय को दूर कर एक गृहस्थ के पास धर्म सीखा। कितने लब्ध प्रतिष्ठ बौद्ध भिक्षु जो भगवान की वाणी के प्रसिद्ध अन्वेषक और उद्‌घोषक हैं, मूर्धन्य जैन मुनि और साध्वियां जो अपने-अपने तीर्थ के, गच्छ के पूज्य हैं, प्रतिष्ठित हैं, कितने ईसाई पादरी और साध्वियां जो कि ईसाई समाज में वरिष्ठ हैं, वरेण्य हैं, कितने हिंदू संन्यासी जो कि अपने भक्तों में प्रणम्य हैं – एक गृही से साधना सीखने के लिए तैयार हुए। बहुत बड़ी अहमन्यता का प्रश्न था, प्रतिष्ठा का सवाल

था। कोई क्या कहेगा? उनके अनेक अनुयायी क्या कहेंगे? किसी गृहस्थ के पास कोई लौकीय अपरा विद्या सीखे– जैसे कोई भाषा सीखे, व्याकरण सीखे, गणित सीखे, भूगोल सीखे, विज्ञान सीखे तहां तक तो ठीक परंतु आध्यात्मिक पराविद्या सीखने के लिए अपने अहंभाव को शून्य कर लेना होता है। और ऐसा ही किया इन धर्म मुमुक्षुओं ने। इन गृहत्यागियों ने किस लगन और निष्ठा के साथ धर्म सीखा! कितने कष्ट सहे! अपने सांप्रदायिक कर्मकांडों को गौण मान कर शुद्ध धर्म साधना की निरंतरता के अभ्यास को महत्त्व देते हुए शिविरों में शामिल हुए। अनेक जैन मुनि और साध्वियां तो सैकड़ों मीलों की पैदल यात्रा करके शिविरों में शामिल होने आए। धन्य है उनकी धर्म जिज्ञासा! धन्य है उनका मुमुक्षुभाव! धन्य है उनकी त्याग तपस्या! अनेक जन्मों के संचित पुण्य-पारमिताओं के धनी हैं वे। तो ही धर्मसाधना की ओर उन्मुख हुए। उनमें से एक-एक को याद करता हूं तो श्रद्धा भरे पूज्य भाव से मन-मानस उर्मिल-उर्मिल हो उठता हैं।

पिछले एक दशक में विपश्यना प्रशिक्षण के क्षेत्र में जो कुछ भी हुआ, उसका किंचित मात्र भी अवमूल्यन नहीं करता अन्यथा इतने लोगों की सेवा का अवमूल्यन होगा। परंतु फिर भी इतना तो समझता ही हूं कि यह तो मात्र पहला कदम था। यात्रा लंबी है। पुण्यभूमि भारत को आधार बना कर सारे विश्व में विपश्यना का आलोक प्रसारित करना है। जीवन भर का काम है। खड़ी चढ़ाई है, विघ्न है, बांधाएं हैं। अपने ही भीतर की बाधाएं, बाहर की बाधाएं, पारिवारिक बाधाएं, सामाजिक बाधाएं, अनेकानेक धर्मविरोधी शक्तियों की बाधाएं। इन बाधाओं को पार करने के लिए धर्म का बल भी अपेक्षित है। धैर्य, सहिष्णुता, लगन और निरहंकारता का धर्म बल। कभी-कभी कठिनाइयां सामने आती हैं तो अपनी ही दुर्बलता के कारण कुछ देर के लिए घुटने टिक जाते हैं। लेकिन शीघ्र ही उठ खड़ा होता हूं और घुटने झाड़ कर दुगने धर्मबल से फिर आगे बढ़ चलने का क्रम शुरू कर देता हूं। अब तक जो यात्रा पूरी की है उसी से आगे बढ़ने का बल मिलता है। अब तक की यात्रा पूरी करने का बल कृतज्ञता का ही धर्मबल है। यही संबल है आगे की यात्रा के लिए।

इसलिए मन बार-बार कृतज्ञता के भावों से भरता रहता है। आभार मानता हूं उन भगवान अर्हत सम्यक संबुद्ध का, जिन्होंने यह विलुप्त विद्या

पुनः खोज निकाली और इससे आत्महित ही नहीं साधा बल्कि सर्वहित के लिए मुक्तहस्त से इसका वितरण किया। आभारी हूं भगवान बुद्ध से लेकर परम पूज्य गुरुदेव ऊ बा खिन तक की गुरु-शिष्य परंपरा का, जिसने कि यह कल्याणकारी विद्या अपने शुद्ध रूप में कायम रखी और परिणामतः हमें प्राप्त हुई। आभारी हूं मा सयामा का, जिसने धर्मपथ पर अपरिमित मंगल मैत्री का संबल दिया, आभारी हूं अपने परिवार के सभी लोगों का जिनका सहयोग जनहितकारी साबित हुआ। आभारी हूं धर्म के सभी साथी, संगी, सहयोगी, सहकारी और संरक्षकों का, जिनका साथ सचमुच पथ का पाथेय बना हुआ है। पिछले दस वर्षों में जाने-अनजाने, चाहे अनचाहे मन, वचन या शरीर से जिस किसी के प्रति कोई अपराध हुआ हो, उससे करबद्ध क्षमायाचना करता हुआ सबका आभारी हूं! आभारी हूं!! अत्यंत आभारी हूं!!!

साठ वर्ष पूरे हुए

("विपश्यना" पत्रिका, २ फरवरी ८४)

जन्म से मृत्यु तक की दौड़ के साठ वर्ष पूरे हुए। आगे और न जाने कितने बाकी हैं। पीछे की ओर मुड़ कर सिंहावलोकन करता हूं तो जीवन के अनेक खट्टे-मीठे अनुभवों के बावजूद, उतार-चढ़ाव के भाटे-ज्वार के बावजूद, पतझड़-बसंत की विविध रंगीनियों के बावजूद मन सुखद संतोष का ही अहसास करता है।

मानसपट पर अनेक चित्र उभर कर आते हैं जिनमें से कुछ बहुत ही स्पष्ट हैं, उजागर हैं।

म्यंमा (बर्मा) की पुरानी राजधानी रत्नपुंज मांडले नगरी में जन्मा हुआ एक बालक। ७-८ वर्ष की उम्र। ७२-७३ वर्षीय पितामह की छत्रछाया में पलता है। बाबा की जबान पर राजस्थानी दोहों का अक्षय भंडार। समय-समय पर उनके मुँह से कोई एक मर्म-स्पर्शी दोहा फूट पड़ता है। मन पर गहरी छाप पड़ती है।

सुबह-सुबह सफेद धोती-कुर्ता पहन कर, गुलाबी राजस्थानी पगड़ी सिर पर बांध कर जब बाहर जाने के लिए तैयार होते तो अक्सर यह बालक भी साथ हो लेता। बाबा अपनी लाठी पकड़ते हुए एक दोहा गाते। बहुत करुण कंठ से गाते–

चल सुंदर मिंदर चलां, तुझ बिन चल्यो न जाय।
माता दी आसीसड़ी, बै दिन पूग्या आय॥

कभी उस बालक को दोहे का अर्थ भी समझाते हुए कहते– "अरे, मैं इस लाठी से कहता हूं कि ऐ सुंदरी लाठी! चल मंदिर चलें! अब तो शरीर दुर्बल हो गया। तेरे सहारे बिना चल भी नहीं सकता। बचपन में मां ने आशीषें दी थी "बूढ़ो डोकरो होए!" मां की आशीषें फलीभूत हुईं। देखो, बूढ़ा डोकरा हो गया न!"

और एक बेबसी की हँसी हँसते।

एक बार बूढ़े बाबा बीमार पड़े। चंद दिनों में ही हालत बिगड़ी। बिस्तर पर लेटे-लेटे एक दोहा फूट पड़ा।

पात झड़न्ता यूं कह्या, सुन तरुवर बनराय।
इबका बिछुड़्या ना मिलां, दूर पड़ांगा जाय॥

कितनी बेबसी है! पत्ते जर्जरित होते हैं तो न चाहते हुए भी झड़ ही जाते हैं। प्यारे पेड़ से बिछोह हो ही जाता है और फिर मिलन नहीं होता। कितने असहाय हैं!

जरा है, मृत्यु है – अनित्य है। इन पर अपना कोई अधिकार नहीं – अनात्म है। और यह बेबसी – दु:ख है। अनित्य, अनात्म, दु:ख। अनित्य, अनात्म, दु:ख। शुद्ध धर्मभरा दोहा।

एक रात घर के लोग देर तक जागते रहे। यह नन्हा-सा बालक भी बाबा की खाट के पास बैठा रहा। प्रात:काल सूर्योदय के पूर्व बाबा की हालत ज्यादा बिगड़ी। लोगों ने खाट से उठा कर धरती पर लिटा दिया। बालक को दूर ले जाने की कोशिश की। पर वह हठपूर्वक बैठा ही रहा। अपने बाबा की ओर एकटक देखता रहा। अब सांस रुक-रुक कर आने लगी। बाबा ने आँखें खोली। सबने झुक कर नमन किया। बालक ने भी नमन किया। बाबा मुस्काराए। हाथ उठा कर आशीर्वाद दिया और जो सांस छोड़ी वह लौट कर वापस नहीं आयी। बाबा का हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में उठा ही रह गया। लोगों ने अर्थी तैयार की। बाबा के शरीर को सजी हुई अर्थी पर लेटाया गया। कीमती दुशाला ओढ़ाया गया। पर हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में ही उठा रहा।

“राम नाम सत्य है। सत्य बोले मुक्ति है।”

लोग अर्थी लेकर चल पड़े।

नन्हें बच्चों को श्मशान-भूमि नहीं ले जाते। पर बालक नहीं माना। बाबा को विदाई देने श्मशान-भूमि तक गया ही। चिता तैयार की गयी। बाबा का कफन-लिपटा शरीर चिता पर रख दिया गया। हाथ अब भी आशीर्वाद की मुद्रा में ही उठा था। चिता जल उठी। कुछ देर के बाद जो राख बची वह समीप बहती हुई इरावदी गंगा में प्रवाहित कर दी गयी। बाबा को विदा कर सब घर लौट आये। बाबा का आशीर्वाद भरा अभय मुद्रा वाला हाथ बालक के जीवन का संबल बन गया।

लगभग ७ वर्ष की उम्र में बालक ने इतनी समीप से जरा का दर्शन किया, व्याधि का दर्शन किया, मृत्यु का दर्शन किया और इन तीनों में से मुस्कारा कर गुजरते हुए एक संत का दर्शन किया।

बालक के मन-मानस पर पड़ा हुआ शुद्ध धर्म का यह बीज २४ वर्षों के बाद एक नन्हें से पौधे के रूप में उगा जो कि कालांतर में एक विशाल वृक्ष के रूप में फैल गया।

बालक किशोर अवस्था की ओर बढ़ने लगा। सारे घर का वातावरण बहुत सात्विक। पिता शिव के अनन्य भक्त। किशोर नित्य शिवमहिम्न स्तोत्र और शिव-तांडव स्तोत्र का सस्वर पाठ करने लगा। माता कृष्ण की अनन्य भक्त। किशोर नित्य गोपाल सहस्रनाम और विष्णु सहस्रनाम का पाठ करने लगा। कुछ दिनों के बाद गीता का पाठ भी करने लगा! घर के ठाकुरद्वारे में पिता के साथ नित्य पूजा में बहुत रस लेने लगा।

प्राथमिक शिक्षा के गुरु अत्यंत कोमल हृदय भक्त। सुबह-सुबह सूर, तुलसी, मीरा का कोई पद मधुर कंठ से गाते तो गाते-गाते द्रवित हो जाते। किशोर तन्मय होकर सुनता तो उसका भी हृदय पिघल जाता। आंखों से अश्रुधारा बहने लगती। उनके साथ कीर्तन करता तो उस में भी तन्मय हो जाता। भाव-विभोर हो जाता।

सारे परिवार पर श्री जयदयालजी गोयन्का और श्री हनुमानप्रसादजी पोद्दार का गहरा प्रभाव। गीताप्रेस गोरखपुर का सारा साहित्य घर पर आता । यह किशोर भक्तों की कथाएं बड़े चाव से पढ़ता। भक्त बालकों की कथाएं पढ़ते हुए अजस्र अश्रुधारा बहने लगती। कुछ और बढ़ा तो राम-चरित मानस में बहुत रस आने लगा। उसकी अनेक चौपाइयां किशोर के हृदय को द्रवित करने लगीं। भक्ति की इस मधुर रसधारा में जीवन अत्यंत सरस हो उठा।

घर के पड़ोस में आर्य समाज का मंदिर था। किशोर १०-१२ वर्ष का हुआ तो हर रविवार को वहां भी जाने लगा। समाज-सुधार की अनेक अच्छी बातों का मन पर बहुत गहरा असर पड़ा। तीसरी कक्षा से दसवीं कक्षा तक पढ़ाई स्थानीय खालसा स्कूल में हुई। अधिकांश सहपाठी और अध्यापक सिक्ख सरदार थे। सुबह की पढ़ाई "एकोंकार सत्तनाम" के पावन पाठ से

शुरू होती। समय-समय पर समीप के गुरुद्वारे भी जाता, जहां गुरुवाणी का पाठ होता। नानक, कबीर, दादू और अन्य संतों की वाणी किशोर का मन मुग्ध कर देती।

ऐसे बहुरंगी सरस आध्यात्मिक वातावरण में किशोर अवस्था के दिन कटे । कुशाग्र बुद्धि होने के कारण स्कूल की हर कक्षा में प्रथम आता रहा। हाई स्कूल की परीक्षा में म्यंमा के हजारों परीक्षार्थियों में प्रथम ११ में से एक होने के कारण सरकार ने छात्रवृत्ति दी। पर पारिवारिक कारणों से कालेज की पढ़ाई नहीं उपलब्ध हुई।

सोलह वर्ष की अवस्था में ही पैत्रिक धंधे में जुट गया और अठारह वर्ष की कुमार अवस्था में विवाह हो गया। भक्ति में द्रवीभूत होते हुए भी कुमार अवस्था से ही वासना का भूत सिर पर सवार हुआ जो कि अब युवावस्था में और तीव्र हो उठा। इसके साथ-साथ क्रोध का पिशाच हावी होने लगा। इन दोनों ने बहुत व्याकुल बनाया। अठारह वर्ष की उम्र में ही द्वितीय महायुद्ध की वजह से कुछ वर्ष म्यंमा छोड़ कर दक्षिण भारत में बिताने पड़े। इस छोटी उम्र में प्राप्त व्यापारिक सफलता ने अहंभाव के दानव को बलशाली बनाया। युद्ध समाप्त होते ही म्यंमा लौट आया और मध्य बीसी की युवावस्था में ही व्यवसाय में आशातीत सफलता मिली। स्थानीय राजस्थानी समाज का ही नहीं, म्यंमा के भारतीय समाज का अग्रणी बना। विभिन्न धार्मिक, शैक्षणिक, व्यापारिक, औद्योगिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक और समाजसेवी संस्थाओं में प्रमुख पद, प्रतिष्ठा, सम्मान मिलने लगे तो अहंभाव का क्या ठिकाना? और उसके साथ-साथ काम और क्रोध भी बढ़ते ही गये। इन तीनों दुश्मनों ने बुरी तरह आक्रांत किया।

भक्तिभाव कम नहीं हुआ। पहले से अधिक तीव्र ही हुआ। हिंदी साहित्य सम्मेलन की साहित्य-गोष्ठियों में सूर, तुलसी, मीरा आदि की जयंतियां मनाते हुए यह युवक स्वयं भी भक्तिभाव में विभोर हो उठता और श्रोतामंडली को भी विभोर कर देता। घर पर अपने ईष्टदेव कृष्ण की भक्ति में देर तक भजन गाता, द्रवीभूत होता। अपने काम, क्रोध, अहंभाव को याद कर आंसू बहाता। बहुत करुणा-विगलित कंठ से अनुनय करता, विनय करता, "प्रभुजी मेरे

अवगुण चित न धरो!” बहुत चाहता कि विकारों से छुटकारा हो जाय, पर वे बढ़ते ही जाते। स्वयं भी दुखी रहता, औरों को भी दुखी बनाता।

इन्हीं दिनों गीता और उपनिषदों का गहराई से अध्ययन करने का अवसर मिला। वेदांत की बारीकियों पर प्रभावशाली भाषण देता। गीता के स्थितप्रज्ञ और अनासक्तिभाव का विश्लेषण करता। श्रोता मुग्ध हो जाते। परंतु बहुधा घर लौट कर अकेले में देर तक आंसू बहाता, दुःखी होता – मुझ में स्थितप्रज्ञता का, अनासक्ति का नामोनिशान नहीं। विकारों का पुंज। न आर्द्र-द्रवीभूत करने वाली भक्ति ही इन्हें निकाल पायी और न बाल की खाल खैंचने में समर्थ दार्शनिक बुद्धिविलास का वैभव ही। दिन पर दिन विकार बढ़ते ही गये। व्याकुलता बढ़ती ही गयी।

एक ओर विपुल धन, वैभव, ऐश्ववर्य, मान-सम्मान, पद-प्रतिष्ठा और दूसरी ओर यह असीम आंतरिक व्याकुलता। ऐसी दयनीय स्थिति में बड़े सौभाग्य से एकतीस वर्ष के इस दुखियारे युवक का परम गृहस्थ संत सयाजी ऊ बा खिन से संपर्क हुआ। शुद्ध धर्म का मंगल वरदान मिला। विपश्यना की कल्याणकारिणी साधना मिली। अहं की खोल तोड़ कर चूजा बाहर आया । अविद्या की खोल टूटने पर एक सर्वथा नए व्यक्ति का जन्म हुआ। मानव-जीवन सार्थक हुआ! धन्य हुआ! पहले ही शिविर में इतना लाभ हुआ कि जिसका कोई माप नहीं। दो-चार वर्षों में तो न केवल स्वयं को, बल्कि समीपवर्ती परिजनों को भी यह सुखद परिवर्तन प्रभावित करने लगा। धीरे-धीरे सारे परिवार में विपश्यना की धर्म-गंगा बहने लगी। पारिवारिक जीवन असीम सुख-शांति से भर गया।

धर्म का सार हाथ लगा। निकम्मे भावावेश से सदा के लिए छुटकारा मिला। निरर्थक बुद्धि-विलास से सर्वथा मुक्ति मिली। मिथ्या दार्शनिक मान्यताओं का जंजाल छिन्न-भिन्न हुआ। सांप्रदायिक अहमन्यता चूर-चूर हो गयी। शुद्ध धर्म की निर्मल चांदनी जीवन के हर क्षेत्र में छाने लगी। कामवासना की जड़ें उखड़ने लगीं। क्रोध की अग्नि शांत होने लगी। अंतर्मन की तलस्पर्शी गहराइयों तक विकारों की उत्पत्ति का स्रोत पकड़ में आ गया। आरंभ होते ही विकारों का संवर कर लेने की कल्याणी कुंजी मिल गयी। जीवन में सही सुख-शांति समाने लगी।

चौदह वर्ष की लंबी अवधि उस महान संत की शीतल-सुखद छाया में बीती। इस बीच लोकीय जीवन में अनेक परिवर्तन आये। व्यापार-उद्योग में अपूर्व वृद्धि हुई। भौतिक समृद्धि के साथ-साथ सामाजिक और राजकीय मान-प्रतिष्ठा बढ़ी। मन की समता बनी रही। फिर यकायक एक अवसर ऐसा आया कि सारे व्यापार-उद्योग हाथ से छूट गये। उनका राष्ट्रीयकरण हो गया। पर धर्म का अपूर्व आनुभाव! अपूर्व कृपा! चित्त की समता में कोई अंतर नहीं आया। राज्य के प्रति जरा भी द्वेष नहीं, दुर्भाव नहीं। सद्भावना ही सद्भावना! अच्छा हुआ बोझ हटा। अब सद्धर्म के परियत्ति और पटिपत्ति [सैद्धांतिक और व्यावहारिक] दोनों पक्षों को प्रबल करने का अच्छा अवसर मिला। मन प्रसन्नता-विभोर हो उठा। और सचमुच समय का बहुत अच्छा सदुपयोग हुआ। ऐसा न हुआ होता तो इतने लंबे अरसे तक उस महान संत का सुखद सान्निध्य कैसे उपलब्ध होता? सचमुच जीवन धन्यता से भर उठा।

और फिर स्मृतिपटल पर जीवन के एक और महत्त्वपूर्ण दौर का चित्र उभरता है। पैंतालीस वर्ष का यह प्रौढ़ व्यक्ति सद्गुरु का असीम मंगल-आशीर्वाद लेकर पुरुखों की पुण्य-भूमि भारत आता है। अनेक प्रारंभिक कठिनाइयों के बावजूद इस धर्म-देश में धर्म-गंगा प्रवाहमान हो उठती है। अनेक लोगों का सहयोग मिलता है। हजारों लोगों का यह नया विपश्यना परिवार। जैसे अनेक जन्मों के स्वजन-परिजन धर्मसेवा के लिए साथ आ जुटे हों। भारत को अपनी खोयी हुई अनुपम आध्यात्म संपदा पुनः प्राप्त करने का मार्ग खुलता है।

साठ वर्ष वाले इस मील के पत्थर को पार करते हुए मन भविष्य की ओर देखता है। सामने शुद्ध धर्म का राजपथ खुला हुआ है। लक्ष्य स्पष्ट है । पथ का हर कदम लक्ष्य की ओर ले जाने वाला है। आशुफलदायी है।

और मन में यह धर्म-कामना जागती है कि भारत की यह पुरातन अनमोल निधि, जिसे जन्मभूमि म्यंमा ने सदियों सहेज कर रखा, वह भारतवासियों को मुबारक हो! सारे विश्व के लोगों को मुबारक हो! इस देश की नयी पीढ़ी देश की अनुत्तर, अनुपम धरोहर-निधि को सँभालें और पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह कल्याणकारिणी विद्या केवल भारत के ही नहीं, बल्कि सारे विश्व के दुखियारों का कल्याण करती रहे।

धर्मदेश में सवा सौ वर्ष

सवा सौ वर्ष पहले एक अदम्य उत्साही नवयुवक ने अपने पूर्वजों के नगर चूरू से राजस्थान के रेगिस्तान को कहीं पैदल और कहीं ऊंट पर सवार होकर पार किया। फिर कलकत्ते तक की यात्रा रेलगाड़ी से पूरी की। उसके आगे छोटे जहाज में सवार होकर समुद्र पार कर ब्रह्मदेश के रंगून नगर में पहुँचा। आजीविका की खोज में इतनी कष्टभरी यात्रा पूरी की।

मैं नहीं जानता कि बाबा ने बर्मा आते ही किस प्रकार का व्यापार आरंभ किया? परंतु बचपन में उनके मुँह से जो कुछ सुना, उससे अनुमान कर सकता हूं कि उन्होंने अपनी आजीविका कपड़े के व्यापार से ही शुरू की। वे रंगून से कपड़ा खरीद कर उन दिनों की बरमी राजधानी मांडले ले जाकर बेचते होंगे। फिर हो सकता है उन्होंने रंगून और मांडले के बीच होने वाले इस व्यवसाय को बंद करके अन्य क्षेत्र चुना हो। तब वे कपड़े के थान घोड़ों पर लाद कर मांडले से शान प्रदेश में जाने लगे। वहां उन दिनों छोटी-छोटी मंडियों में सप्ताह में एक बार बाजार लगने की प्रथा थी। अलग-अलग मंडी पर अलग-अलग दिन बाजार लगते होंगे। इस कारण बाबा घोड़ों पर माल लादे स्वयं भी एक घोड़े पर चढ़ कर अथवा कभी-कभी घोड़ों के साथ ऊबड़-खाबड़ पथरीले रास्तों पर पैदल चल कर एक बाजार से दूसरे बाजार में जा-जा कर अपना माल बेचते रहे होंगे। हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि इस अध्यवसाय में उन्हें कितना कष्ट उठाना पड़ा होगा? विशेष कर खान-पान में। कट्टर सनातनी निरामिषभोजी संस्कारों के कारण महीने बीस दिन की यात्रा का भोजन वे अपने साथ लेकर चलते होंगे। इन बासी रोटियों और सूखी सब्जी व अचार के साथ अपनी नित्यप्रति की क्षुधापूर्ति करते होंगे। पानी पीने की भी कठिनाई। उसके लिए अपनी लंबी राजस्थानी पगड़ी को खोल कर डोर बनाते हुए अपने साथ लाए लोटे को उससे बांध कर किसी कूंए से पानी निकाल कर पीते होंगे। अनेक वर्षों के इस कठिन परिश्रम के बाद जब उनके तीनों पुत्रों की उम्र भी काम करने लायक हो गयी तब मांडले में एक छोटी-सी दूकान खोल कर स्थिरता से

व्यापार करने लगे। धीरे-धीरे व्यापार बढ़ता गया। छोटी दूकान बड़ी और फिर उससे बड़ी दूकान में परिवर्तित होती गयी। आगे जाकर सारा व्यापार उनके पुत्रों द्वारा संभाल लिए जाने पर वे बिल्कुल निवृत्त हुए।

बाबा की विरासत

१) घुमक्कड़ जीवन

लगता है कि उनके ऐसे कठिन घुमक्कड़ जीवन का विवरण सुन-सुन कर मेरे बाल मानस में भी यायावरीय जीवन की प्रेरणा जागी होगी। अवसर मिलते ही जहां-तहां खानाबदोशी यात्रा करने का उत्साह जागा होगा। शायद यही कारण है कि १२ वर्ष की किशोर अवस्था में मैंने पहली बार स्वयं अकेले लंबी यात्रा की। मांडले से ताजी होते हुए शान प्रदेश के कल्लो नगर में पहुँचा। वहां मेरी बड़ी बहन अपनी जेठानी के यहां कुछ दिनों के लिए रहने गयी थी। मुझे उसे साथ लेकर मांडले आना था। बहुत साहस करके इस यात्रा पर निकला, लेकिन अनुभव नहीं था इसलिए मेरी बहन के जेठ के घर का अता-पता साथ लेकर नहीं चला। अब उस नगर में उसे कहां ढूंढूं? कंधे पर अपना छोटा-सा बिस्तर रखे हुए मैं बाजार में से गुजर रहा था। मुझे उसके जेठ का केवल नाम मालूम था। लेकिन वहां मुझे कोई भारतीय नजर नहीं आया। किससे पूछूं? मेरे भाग्य से उस बाजार में मैंने उसके जेठ को सब्जी खरीदते हुए देखा और दूर से ही उसे पहचान लिया। क्योंकि उनकी बड़ी-बड़ी मूंछे उन्हें अन्य व्यक्तियों से अलग पहचान लेने में सहायक बनीं। यह मेरी अकेले यात्रा करने का पहला अवसर था। इसके बाद तो न जाने कितनी यात्राएं कीं। सबसे कठिन तो १८ वर्ष की उम्र में मांडले से मनेवा (मोञ्वा), कलेवा, टम्मू होते हुए बर्मा भारत की सीमावर्ती दुर्गम पहाड़ियों की पैदल यात्रा करने का रोमांचक अनुभव था। मैं और बाबूभैया हमारे बड़े परिवार के नायक के रूप में इस यात्रा का नेतृत्व कर रहे थे। पिताजी आदि सभी बुजुर्ग मांडले में रह गये थे। वे कुछ दिनों के बाद भारत आ पाए। बर्मा में सब कुछ गँवा कर जब भारत पहुँचे तब आजीविका की खोज में उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों की यात्राएं की और अंततः अपने पूर्व परिचित मित्र पी. शंकरन को खोजता हुआ दक्षिण के मालाबार प्रदेश पहुँचा और उसकी सहायता से वहां व्यापार आरंभ कर

सकने में सफल हुआ। युद्ध के बाद भारत से पुनः बर्मा आने पर भी व्यापार में सफलता मिलती गयी। इस कारण व्यापार के सिलसिले में केवल बर्मा ही नहीं, विश्व के भिन्न-भिन्न देशों में बार-बार यात्रा करता रहा। तदनंतर व्यापार से पूर्णतया निवृत्त होकर धर्मचारिका में लगा, तब फिर केवल भारत ही नहीं, विश्व के कोने-कोने में धर्मयात्रा होती रही और विश्वास है कि यह आजीवन होती ही रहेगी। यह खानाबदोशी जिंदगी मुझे अपने बाबा से विरासत के रूप में प्राप्त हुई है।

२) अनमोल श्रद्धा

महामुनि भगवान बुद्ध के प्रति अनमोल श्रद्धा

लगभग आठ वर्ष की उम्र तक मैं बाबा के निकट संपर्क में रहा। हर छुट्टी के दिन बाबा महामुनि मंदिर जाते। हम दोनों (बाबू भैया और मैं) साथ हो लेते। आरंभ में तो बिजली के ट्रैम की सवारी के आकर्षण से जाते। मांडले के जेजो बाजार से सांजू तक की ट्रैम की सवारी बहुत मनोरंजक लगती, प्रिय लगती। फिर मंदिर में बहुत बड़ा खुला आंगन। वहां कुछ देर दौड़ने-भागने और खेलने-कूदने का आकर्षण बना रहा। परंतु बाबा ने समझाया कि यह भगवान बुद्ध का मंदिर है। यहां हल्ला-गुल्ला और धमा-चौकड़ी करना मना है। अतः तीसरा आकर्षण जागा। मौन रहते हुए मंदिर की तीन परिक्रमा पूरी करके बाबा के पास आ बैठते। बाबा मुख्य मूर्ति के सामने पाल्थी मार कर आंखें बंद करके मौन बैठे रहते। याद नहीं कि बाबा यों कितनी देर बैठे रहते। पर अनुमानतः आध घंटे तो बैठते ही होंगे। मैं नहीं जानता कि वे किसका ध्यान करते थे। और ध्यान भी कैसे करते थे? पहले उनके साथ पांच-सात मिनट बैठने पर ऊब जाते और चुपचाप उठ कर निकल भागते। फिर धीरे-धीरे आंख बंद करके उनके साथ बैठना प्रिय लगने लगा। चारों ओर वातावरण में प्रभूत शांति विराजती। यह अच्छा लगने लगा। पूरे समय बाबा के साथ बैठे रहते। आसपास अनेक लोग ऐसे ही आंख मूंदे बैठे रहते। उनमें से कोई-कोई माला फेरता। बाबा माला नहीं फेरते थे। कोई-कोई बहुत धीमी आवाज में कोई पाठ करता। बाबा कोई पाठ नहीं करते थे। चुपचाप बैठे रहते थे। यों चुपचाप बैठना हमें प्रिय लगने लगा।

मांडले में हमारे घर से दस मिनट पैदल चलने की दूरी पर भगवान सत्यनारायण का मंदिर था। उसके प्रमुख कमरे में कृष्ण और राधा की मूर्तियां थीं। कुछ दूरी पर एक कक्ष में शिव की मूर्ति थी। बाबा को हमने इस मंदिर में जाते कभी नहीं देखा। यद्यपि हम पिताजी के साथ वहां कई बार जाते थे। विशेष आकर्षण तो सावन के महीने में शिवभक्तों की भीड़ का होता। उसी महीने में कृष्ण के मंदिर में झूले की सजावट होती जो बहुत प्रिय लगती। बाबा को इसमें भी सम्मिलित होते हुए कभी नहीं देखा। महामुनि मंदिर की स्वच्छता की तुलना में यहां की अस्वच्छता और गंभीर शांति की तुलना में यहां का हल्ला-गुल्ला उन्हें प्रिय नहीं लगता।

आगे जाकर इकत्तीस वर्ष की उम्र में पहले पहल विपश्यना के शिविर में सम्मिलित हुआ तो वहां के मौन और शांत वातावरण ने बचपन के संस्कार जगाए और उसने मुझे चुंबक की भांति खैंच लिया। पूर्व जन्मों की पारमी भी साथ रही होगी परंतु प्रत्यक्षतः तो बाल्यावस्था में महामुनि के मंदिर में बाबा के साथ पाल्थी मार कर मौन बैठने का जो बीज मानस में पड़ा था उसके पुण्य प्रभाव के कारण प्रथम शिविर में ही मुझे विपश्यना बहुत रास आयी। बचपन से भगवान बुद्ध के शांत व्यक्तित्व के प्रति जो प्रबल आकर्षण था, वह दिनोंदिन बढ़ता गया।

गंभीर विकर्षण भी

बचपन से ही एक विचित्र विरोधाभास का जीवन जीता रहा। पिताजी के कपड़े की दूकान पर मेरे बहनोई श्री महादेवजी नाथानी प्रमुख मुनीम का काम करते थे। वे उम्र में मुझसे बहुत बड़े थे। उनका पुत्र यानी मेरा भांजा भी उम्र में मुझसे कुछ महीने बड़ा था। अतः बचपन से ही मेरे मन पर उनका बहुत बड़ा बुजुर्गाना प्रभाव पड़ा। उनका संयमित जीवन मुझे प्रिय लगता था। वे अत्यंत सादगी का जीवन जीते थे। घुटने तक की मोटी धोती और उसके ऊपर एक साधारण-सी बनियान। घर से बाहर निकलें तो सिर पर पगड़ी। यही उनका नित्य का पहनावा था। किसी पर्व-त्यौहार पर भी उन्हें अन्य कुछ पहने नहीं देखा। चौबीस घंटे में केवल एक बार सादा भोजन करते थे। सुबह चार बजे उठ कर इरावदी गंगा नहाने पैदल जाते थे। लौटते समय गंगा का जल साथ लाते थे और जब प्यास लगती तब वही जल पीते

थे। वे मेरी बहन के पास घर पर न सो कर दूकान में ही सोते थे। उनके एक पुत्र था, एक पुत्री। उनके मुख से कई बार सुना था कि एक पुत्र और एक पुत्री का जन्म होने के बाद अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वानप्रस्थ का-सा जीवन जीना चाहिए।

वे प्रबल शिवभक्त थे। उनकी आवाज में बिजली का-सा करंट था। वे नित्य प्रातः तुमुल स्वर में रुद्रि का पाठ करते थे, शिव-स्तोत्रों का पाठ करते थे। कभी-कभी वेद की ऋचाओं का भी पाठ करते थे। उस समय वे जिस प्रकार अपने हाथ आगे-पीछे, दाएं-बाएं एक नियमवद्ध तरीके से हिलाते, उसका उनके पाठ से क्या समीकरण था? यह तो मैं बिल्कुल नहीं समझता था। परंतु देखने में यह बहुत कौतुकजन्य ही नहीं, प्रिय भी लगता था। परंतु सबसे अधिक हृदयग्राही तो उनकी निन्नादी आवाज लगती थी, जिसकी तरंगें हृदय में झनझनाहट पैदा किया करती थीं। उनके नित्यप्रति के पाठ के कुछ बोल हृदयपट पर गहरे अंकित हो गये थे, जो अब तक अमिट हैं। उदाहरण स्वरूप –

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे, प्रियाणां त्वा प्रियपतिं हवामहे, निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे... इत्यादि।

मैं जब शिवमहिम्न स्तोत्र और शिवतांडव स्तोत्र का सस्वर पाठ करता तो कहीं भूल होने पर वे मेरा उच्चारण सुधारते, स्वर सुधारते। यह मुझे बहुत अच्छा लगता। वे अत्यंत मेधावी व्यक्ति थे। उनका गणित का ज्ञान अद्भुत था। बही-खाते लिखते हुए जब चार अंकों तक की संख्या का जोड़ देते तब औरों की तरह पहले इकाई, फिर दहाई, फिर सैंकड़े और फिर हजार आदि के क्रम से नहीं बल्कि पूरी की पूरी संख्या को एक के बाद दूसरी से जोड़ते जाते और मजाल है कि कुल जोड़ में कहीं भूल रह जाती। इसी प्रकार उनकी स्मरणशक्ति भी आश्चर्यजनक थी। बिना किसी पुस्तक की सहायता के अनेक शास्त्रों के उद्धरण दे-दे कर वहां के संस्कृत पंडितों को आश्चर्यचकित कर देते थे। मांडले के अनेक कथावाचक पुरोहित उनसे धर्म-संबंधी गंभीर वार्तालाप करते। यह देख कर मैं विस्मय विभोर हो जाता।

इन सारी खूबियों के कारण मेरे मन पर उनके प्रति गहरा आदर का भाव छाया हुआ था। बाबा के साथ मैं महामुनि के मंदिर जाता, यह

महादेवजी को बिल्कुल पसंद नहीं था। बाबा के बारे में कभी-कभी कहते कि उनके मानस पर जो बुद्धभक्ति का प्रभाव है वह खतरनाक है। तुम बच्चों को इससे बचना चाहिए। उनकी मान्यता थी कि भगवान बुद्ध हमारे विष्णु के अवतार हैं, अतः उनके प्रति श्रद्धा का भाव रखने में कोई दोष नहीं है। परंतु बार-बार बुद्ध मंदिर जाने से बौद्धों के चक्कर में पड़ जाने का खतरा है। वे स्वयं कभी किसी बुद्ध मंदिर में नहीं गये। किसी शास्त्र का प्रमाण देते हुए वे कहा करते थे कि संकड़ी गली हो और सामने से उन्मत्त हाथी आ रहा हो, जिससे कुचले जाने का खतरा हो। तो भी यदि बाईं ओर जैन मंदिर हो, दाईं ओर बुद्ध मंदिर हो और उनके दरवाजे खुले हों, ऐसी अवस्था में अपनी जान बचाने के लिए भी इनमें से किसी मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए। भले हाथी से कुचले जायँ, पर ऐसी गल्ती न करें। वे बार-बार इस तथ्य को दुहराते थे कि भगवान विष्णु ने बुद्धावतार इसीलिए लिया कि असुरों को वैदिक धर्म से च्युत करके मोह-माया में लपेट लें, जिससे कि वे स्वर्ग न जाकर नरकगामी हों। इस संबंध में भी वे शास्त्रों के अनेक श्लोकों का उद्धरण देते थे। आगे जाकर यह बात समझ में आयी के वे उद्धरण अवश्य विष्णुपुराण के ही रहे होंगे।

बाबा और बहनोई दोनों मेरे लिए पूज्य थे। बहनोई की विद्वत्ता की मन पर गहरी छाप थी और उनके बार-बार दोहराने पर 'शास्त्रवचन प्रमाण' की मान्यता उन दिनों बालमानस पर गहराई से अंकित हो गयी थी। शास्त्र कभी गलत नहीं हो सकते। इसलिए मैं अपने आपको बुद्ध की शिक्षा से तो दूर रखता रहा, परंतु बाबा के प्रभाव के कारण भगवान बुद्ध के महाकारुणिक व्यक्तित्व के प्रति परम श्रद्धालु बना रहा। दूसरे महायुद्ध के समय भारत गया तो वहां जो भी साहित्य पढ़ा, जिस किसी व्यक्ति से इस संबंध में चर्चा हुई, उससे बुद्ध की शिक्षा के विरुद्ध पूर्वाग्रह गहराता ही चला गया।

अजीब दुरभिसंधि का जीवन जी रहा था। एक ओर भगवान बुद्ध और उनकी करुणा के प्रति अमिट श्रद्धा जो कि मेरी उन दिनों की कविताओं में स्पष्ट परिलक्षित होती हैं और दूसरी ओर उनकी शिक्षा के प्रति नितांत अश्रद्धा। पीछे मुड़ कर देखता हूं तो पाता हूं कि यह बाबा का ही प्रभाव था जिसने मेरे मानस में भगवान बुद्ध की शिक्षा के प्रति हजार पूर्वाग्रह रहते हुए भी स्वयं तथागत के प्रति जागी हुई श्रद्धा को कम नहीं

होने दिया और बाबा की यह विरासत मेरे लिए विपश्यना की संपुष्ट आधार बन सकी।

३) राजस्थानी दोहे और लोक कथाएं

इन दोनों का बाबा के पास अमित भंडार था। वे मानो इनके सजीव विश्वकोष थे। उनसे नित नई लोककथा और नित नए दोहे सुनने को मिलते थे। अनेक दोहे ऐसे भी थे, जिन्हें वे कई बार दोहराते थे। उनसे सुनी हुई लोककथाएं मनोरंजक भी होती थीं और शिक्षाप्रद भी। इसी प्रकार उनसे सुने हुए दोहों में धर्म भी समाया होता था और साथ-साथ व्यावहारिक लोकनीति का भी यथेष्ठ समावेश होता था। मुझे वे दोहे अत्यंत प्रिय लगते थे। शायद इसी कारण मुझमें दोहे रचने की प्रतिभा जागी। उनके जीवित रहते ही मैंने ७-८ वर्ष की उम्र में प्रथम दोहे की रचना की। उस दोहे की एक भूल बाबा ने स्वयं हँसते हुए सुधारी। इस प्रकार मेरे लिए साहित्य सृजन का श्रीगणेश उनकी छत्रछाया में ही हुआ, जो कि अब तक चल रहा है।

४) देशप्रेम

बाबा दैनिक समाचारपत्र पढ़ने का बहुत शौक रखते थे। लेकिन आंख कमजोर होने के कारण वे स्वयं नहीं पढ़ पाते थे। मैं उन्हें पढ़ कर सुनाता था। उस छोटी उम्र में भी मेरा हिंदी का ज्ञान सामान्य से अधिक था। अतः पढ़ने में मुझे कोई कठिनाई नहीं होती थी। इन समाचारों पर बाबा की टिप्पणियां सुन कर साधारण ज्ञान तो बढ़ता ही था, उनके हृदय में समाये हुए देशप्रेम के भाव मुझे बहुत प्रभावित करते थे। अंग्रेजों ने भारत और बर्मा को गुलाम बनाया, इसका उनके मन पर बहुत गहरा खेद था। अतः स्वतंत्रता आंदोलन के हर समाचार को वे बहुत रस लेकर सुनते थे और बहुधा अपनी टिप्पणी भी करते थे। इसका भी मेरे मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। आगे जाकर मैं स्वाधीनता के आंदोलन में कोई सक्रिय भाग लेने में तो सफल नहीं ले सका, परंतु बाबा द्वारा मातृभूमि बर्मा और पुरुखों की भूमि भारत के प्रति जो प्रेम का बीज बोया गया, उस स्वदेशप्रेम का भाव उन दिनों की मेरी कविताओं में स्पष्टतया प्रस्फुटित हुआ। दोनों देशों के प्रति मंगल कामना के प्रबल भाव आज भी मन में जागरूक रहते हैं।

बाबा को बरमी नरेशों के प्रति भी बहुत प्यारभरा रुझान था। वे उनकी धार्मिक भावनाओं की भूरि-भूरि सराहना किया करते थे। कहते थे कि अंग्रेजों ने धोखे से उनका राज्य छीना और अंग्रेजी राज्य आने के आद देशवासियों की आर्थिक बर्बादी ही नहीं हुई, बल्कि धर्म के क्षेत्र में भी हानि हुई। अंतिम राजा तीबो को जब मांडले के राजमहल से बंदी बना कर इरावदी तट पर ले गये तो उस दृश्य का स्मरण उनको बहुत व्यथित करता था। इसके पश्चात राजा तीबो को भारत के पश्चिमी तट पर नजरबंद बना कर अत्यंत दुरावस्था में रखना भी उनके मन को पीड़ा पहुँचाता था। अंतिम बरमी नरेश पर हुए इस अमानुषिक अत्याचार के दु:ख का मेरे मन पर भी गहरा प्रभाव पड़ा।

बाबा के मन में बर्मा के सात्विक विचारों वाले लोगों के प्रति बहुत सराहनीय भाव थे। उनकी ईमानदारी और सादगीभरे जीवन की वे सदा प्रशंसा किया करते थे। अंग्रेजी राज्य आने के बाद बर्मा के लोगों पर जो विदेशी कुप्रभाव पड़ा, उससे वे दु:खी होते थे।

आगे जाकर मैंने भी देखा कि भले ही सफेद भेड़ों की भीड़ में कुछ एक काली भेड़ें भी होती हैं, परंतु सामान्यतया बरमी लोग औरों की अपेक्षा अधिक शीलवान होते हैं। उसका एक कारण यह भी है कि वे बचपन से यही सीखते हैं कि दुराचार करेंगे तो उसका दुष्फल भोगना ही पड़ेगा। न कोई अदृश्य शक्ति हमें इससे बचा सकती है और न ही कोई कर्मकांड। इसलिए 'जैसा कर्म वैसा फल' के नैसर्गिक सिद्धांत में अटूट विश्वास होने के कारण वे अपने कर्मों के प्रति बहुत सजग रहते हैं। इसी कारण अपनी पुरातन धार्मिक संस्कृति को जीवित रखने के लिए सतत सचेष्ट रहते हैं। यही कारण है कि उस देश पर पश्चिमी सभ्यता का उतना दूषित प्रभाव नहीं पड़ सका। उन्होंने अपनी राष्ट्रीय भेषभूषा तक नहीं त्यागी। स्वाधीनता के पश्चात उस देश में सद्धर्म के पुनर्जन्म की चेतना स्पष्ट दीखती है। मुझे यह बहुत प्रिय लगता है। बाबा की वसीयत में अपनी मातृभूमि के प्रति प्यार का तोहफा मिला। मैं धन्य हुआ!

५) ग्राहकों के प्रति वफादारी

बाबा बहुत वर्षों पूर्व व्यापार-व्यवसाय की जिम्मेदारियों से सर्वथा

मुक्त होकर निवृत्ति का जीवन जी रहे थे। उनके तीनों पुत्र व्यापार में जुटे हुए थे। कभी-कभी व्यापार में नैतिकता से संबंधित कुछ बोल उनसे सुनने को मिल जाते थे। उनका मन पर गहरा असर होता था। वे अपने व्यापारी जीवन के जो अनुभव सुनाते थे, वे बहुत प्रभावी होते थे। वे बताया करते थे कि थोड़े से भारतीय व्यापारियों ने तत्कालीन बरमी सरकार को धोखा दिया, जिसके कारण सारा भारतीय व्यापारी समाज बरमी राज्य की नजरों में अपनी प्रतिष्ठा खो बैठा। उनके इस कथन का मन पर गहरा प्रभाव पड़ा।

व्यापार के क्षेत्र में नैतिकता पर बोलते हुए वे बहुत बार कहा करते थे कि ग्राहक हमारा अन्नदाता है। हमारे घर जो कमाई आती है, वह ग्राहकों से ही प्राप्त होती है। अतः अपने अन्नदाता को कभी धोखा नहीं देना चाहिए। उनकी इस शिक्षा का मेरे मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। व्यापार के दौरान तो इस शिक्षा का पालन किया ही, अब निवृत्त होकर विपश्यना के प्रसारण में लगा हूं तो पिछले कुछ वर्षों से अमेरिका, कनाडा, यूरोप और अब भारत के भी अनेक शीर्षस्थ व्यापारी विपश्यना के प्रति आकर्षित हो रहे हैं, उन्हें भी यही धर्मसंदेश देता हूं।

६) व्यापार और 'बंडुला'

बाबा जब बर्मी नरेशों के बारे में कुछ बोलते थे तो कभी-कभी बंडुला नामक एक महासेनापति का भी उल्लेख करते थे। बाबा की यह मान्यता थी कि वह बहुत वीर और देशभक्त सेनानायक था। परंतु किसी युद्ध में अंग्रेजों ने उसे धोखे से मार गिराया। बर्मी लोगों के मानस पर अपने सेनानायक के प्रति विपुल सम्मान की भावना है। मुझे बाबा से ही नहीं, आगे जाकर अन्य लोगों से भी यह जानकारी मिली। इस नाम को लेकर हमारे व्यापारी प्रतिष्ठान में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी। हमारी मांडले की दूकान के लिए अधिकतर कपड़ा रंगून से खरीद कर लाया जाता और थोक में बेचा जाता था। कुछ मात्रा में कपड़ा भारत से भी आयात किया जाता था। उन दिनों हमारे यहां मालाबार (केरल) से पलेका लुंगियों का आयात होता था। मालाबार के कन्नानूर नगर से पी. शंकरन नाम का एक विक्रेता नियमित रूप से मांडले आता था। हमारी दूकान से तथा अन्य दूकानों से लुंगियों का आर्डर लेता और फिर लौट कर भारत से उनका निर्यात करता था। एक बार

ऐसी घटना घटी कि वह अपने माल का आर्डर लेने के लिए जब मांडले आया हुआ था तो उससे मेरा संपर्क हुआ। उस समय मेरी उम्र लगभग १२ वर्ष की थी। पी. शंकरन न हिंदी जानता था और न बर्मी। हमारे यहां कोई अंग्रेजी जानने वाला नहीं था। अतः वह जब-जब आता तो किसी स्कूल के अंग्रेजी जानने वाले मास्टर को बुलाया जाता। उसके माध्यम से बात-चीत होती। लेकिन इस बार जब वह आया तो पिताजी ने कहा तू भी अंग्रेजी पढ़ता है, तू ही क्यों न इससे बात-चीत करे। मुझे जैसी भी अंग्रेजी आती थी, उससे बातचीत शुरू की। वह भी खुश हुआ, पिताजी भी खुश हुए। सदा की भांति उसे लुंगी सप्लाई करने का अच्छा खासा आर्डर दिया गया। उस समय उसने बताया कि यदि हम चाहें तो इन लुंगियों पर अपने ट्रेड मार्क का लेबल लगवा सकते हैं। पिताजी को यह बात बहुत पसंद आयी। क्योंकि हमारी ओर से आयात की गयी लुंगियां शान प्रदेश, कच्छिन प्रदेश और छिन प्रदेश में ही नहीं, बल्कि उत्तरी बर्मा के मैदानी इलाकों में भी बहुत बड़ी मात्रा में बिकती थीं। उन लुंगियों पर किसी अन्य व्यापारी का ट्रेडमार्क लगा रहता था। उन पर यदि हमारा ट्रेडमार्क लगे तो उसके प्रसिद्ध हो जाने पर भविष्य में हमें इसका लाभ मिले। अब प्रश्न उठा कि क्या ट्रेडमार्क लगाया जाय जो हमें भी पसंद हो और हमारे उपभोक्ताओं को भी? उस समय मेरे मन में 'बंडुला' का नाम उभरा। पिताजी ने भी उसे ठीक समझा। मैं जब-जब महामुनि मंदिर जाया करता तो देखता कि वहां किसी चित्रकार एक दूकान थी, जहां बहुत सुंदर चित्र बेचता था। मैं वहां गया और उस चित्रकार को बंडुला का चित्र बनाने को कहा। उसने तुरंत दो चित्र बनाए – एक तो खड़े हुए सेनापति बंडुला का और दूसरा केवल प्रतीकात्मक – उसकी प्रसिद्ध टोपी, तलवार और म्यान का। यह दूसरा चित्र मुझे अधिक पसंद आया और पिताजी को भी। वह चित्र पी. शंकरन को दे दिया। इसके पश्चात जब कभी हम मालाबार से लुंगी आयात करते तो उस पर हमारा यही ट्रेडमार्क लगा रहता। कुछ समय बाद यही ट्रेडमार्क हमने अहमदाबाद से आयात किये गए सफेद कपड़े के थानों पर भी लगाया। बंबई से आयात किये गये टर्किस तौलियों पर भी लगाया। लेकिन यह मार्का लुंगियों पर ही अधिक प्रसिद्धि पा सका।

यह सब युद्धपूर्व का विवरण है। दूसरे महायुद्ध के बाद जब पुनः बर्मा

आकर व्यापार करने लगे तब मुझे बचपन में अपने द्वारा चुने गये इस 'बंडुला' नाम के प्रति स्वाभाविक लगाव था। आगे जाकर जब यह विदित हुआ कि भगवान बुद्ध के जीवनकाल में भगवान के श्रद्धालु कोशलनरेश प्रसेनजित के वीर सेनापति और भगवान की प्रमुख शिष्या मल्लिका के पति का नाम भी बंधुल था और बंडुला इसी शब्द का बरमी उच्चारण है, तब यह नाम और अधिक प्रिय लगने लगा। अतः उन दिनों जो उद्योग लगाये उनके लिए बंडुला नाम का प्रयोग किया। जैसे कि "बंडुला ब्लैंकेट मिल्स", "बंडुला प्लास्टिक्स", "बंडुला ब्रान ऑयल्स", "बंडुला टेक्सटाइल्स" इत्यादि। कुछ ऐसा संयोग हुआ कि सभी उद्योगों को दिया गया यह नाम जनप्रिय हुआ। विशेष कर 'बंडुला' ट्रेडमार्क की कंबलें तो बहुत ही प्रसिद्ध हुईं। इस प्रसिद्धि का एक अन्य कारण यह भी था कि हम पर बाबा की नैतिकतापूर्ण व्यापारिक नीति अपनाने का गहरा असर होने के कारण हमने इसकी क्वालिटी का मापदंड ऊंचा रखा। ग्राहक को माप और क्वालिटी में किसी प्रकार का धोखा न हो, इस बात का पूरा ध्यान रखा।

इसके बाद मेरे व्यापार से सर्वथा निवृत्त हो जाने के पश्चात जब बर्मी सरकार ने प्राइवेट व्यापार की छूट दी तो यह देख कर प्रसन्नता हुई कि मेरे पुत्रों ने बर्मा में जो व्यापारिक प्रतिष्ठान स्थापित किये, उनका नाम भी बंडुला रखा। यद्यपि व्यापारिक क्षेत्र से मुझे कोई सरोकार नहीं था, तथापि मैं यह देख कर बहुत प्रसन्न हुआ कि मेरी अगली पीढ़ी बंडुला के नाम को नहीं भूली है। अब तो यह देख कर और अधिक प्रसन्नता हुई कि मेरे पौत्रों ने भी म्यंमा में जो नए व्यापार की स्थापना की है, उसे भी बंडुला का ही नाम दिया। मेरे लिए यह सचमुच बड़ी प्रसन्नता का विषय था। बाबा ने बर्मी नरेशों के साथ बर्मा के जिस ऐतिहासिक प्रधान सेनापति 'बंडुला' की प्रशंसा की थी और जिस नाम की मेरे मानस पर गहरी छाप पड़ी थी, वह नाम बर्मा में व्यापार करती हुई बाबा की पांचवी पीढ़ी तक ने भी कायम रखा। अब तो बरमा का सारा गोयन्का परिवार ही मानो 'बंडुला' के नाम से जुड़ गया। मेरी मातृभूमि बर्मा में पिछले सवा सौ वर्षों से पांचवी पीढ़ी तक चला आ रहा बाबा का गोयन्का परिवार अब बंडुला प्रतिष्ठान का पर्यायवाची हो गया। इसे देख कर मेरा मन मुदित हुआ।

बहुप्रचलित राजस्थानी शब्दों के अर्थ

१) रा, री, रै, रो = का, की, का, को

२) सो = सदृश

जैसे – गुरुवर समदर सो मिल्यो= गुरुवर समुद्र सदृश मिले।

३) वै = ए और हे,

जैसे – र वै = रहे, बाबा! मन निरमळ र वै= बाबा मन निर्मल रहे।

४) सारा, सारो = सब, सभी

५) घणा = बहुत,

जैसे – मिल्यो घणो सम्मान= बहुत सम्मान मिला।

६) ओटी = वापस,

जैसे – बाबा! ओटी सूंपतां = बाबा! वापस सौंपते हुए।

७) ईं = इस,

जैसे – ईंरी ईंनै सूंपता = इसकी इसको सौंपते हुए।

८) अर = और,

जैसे – सरधा अर किरतग्यता = श्रद्धा और कृतज्ञता

९) ध्यान दें – पालि की भांति राजस्थानी में भी ‘श’ ‘ष’ का प्रयोग नहीं होता। सर्वत्र ‘स’ का ही प्रयोग होता है।

१०) धन = धन्य, धन-दौलत

जैसे – अन धन भर्या भँडार = अन्न-धन से भंडार भरे हैं।

११) किसा क = कैसे,

जैसे – किसा क सज्जन लोग = कैसे सज्जन लोग!

१२) ह्वै = होवे, जैसे – मंगल ह्वै = मंगल होवे!

१३) स्यूं = गा,

जैसे – कदे न भूलस्यूं = कभी नहीं भूलूंगा।

१४) स्यूं = से,

जैसे – करुणा स्यूं भरपूर = करुणा से भरपूर।

१५) इस्यो = ऐसा,

जैसे – धरमदेस बास्यो इस्यो = ऐसे धरमदेश में बसे।

१६) मँह = में,

जैसे – बिरमा देश मँह = बरमा देश में।

१७) पण = परंतु,

जैसे – पण पीतो ना नीर = परंतु जल नहीं पीता।

१८) मोड़ै = देर से,

जैसे – मोड़ै हुई पिछाण = देर से पहचान हुई।

१९) दिवळो = दीपक

२०) चसग्यो = प्रकाशित हुआ।

जैसे – दिवळो चसग्यो धरम रो = धर्म का दीपक प्रकाशित हुआ।

२२) भेलो कर्यो = इकट्ठा किया।

जैसे – धरम रतन भेलो कर्यो= धर्मरत्न इकट्ठा किया।

२३) हुइग्यो = हो गया।

जैसे – हुइग्यो दुक्ख निरोध = दुःख निरोध हो गया।

२४) सैंको = सबका,

जैसे – सैंको मंगल होय= सब का मंगल हो!

२१) मोकळी, मोकळो = बहुत

जैसे – करी कमाई मोकळी, बाबा! बिरमा देस= बर्मा में बहुत कुछ अर्जित किया।

२६) कठै, अठै, बठै, जठै = कहां, यहां, वहां, जहां।

२७) बिणजता = व्यापार करते।

जैसे – ओर देस जा बिणजता = (किसी) और देश में जाकर व्यापार करते।

२८) भोत = बहुत

जैसे – धन तो पाता भोत = धन तो बहुत पाते।

२९) दाळद = दारिद्र्य।

जैसे – दाळद हुइग्या सेस = दारिद्र्य दूर हुआ।

३०) खोळ = शरीर, जीवन।

जैसे – बाबा! दाळद मिट गया, सुफळ हुयी या खोळ = बाबा! दारिद्र्य मिटा और मानव जीवन सफल हुआ।

३१) रतनपुंज = म्यंमा की मांडले (मोगोक?) नगरी।

३२) तोड़ा = कमी।

जैसे – अन धन रा तोड़ा नहीं = अन्न-धन की कमी नहीं।

३३) निरवाण = चार परमार्थ सत्य।

जैसे – पास्यां पद निरवाण = परमार्थ सत्य (निर्वाण) प्राप्त करेंगे।

३४) परस = स्पर्श।

जैसे – पारस परसै लोह नै, सुवरण देय बणाय = पारस के स्पर्श से लोहा स्वर्ण बन जाता है।

३५) लोय = लौ।

जैसे – सांच धरम री लोय = सत्य धर्म की लौ।

३६) लख चोरासी जूण = चौरासी लाख योनियां।

३७) लूण = नमक।

जैसे – आटो पाणी लूण = आटा, पानी और नमक।

३८) मुरतब = सम्मान।

जैसे – सुख संपद मुरतब दियो = सुख, संपत्ति और सम्मान दिया।

४०) खोट = दोष

जैसे – मिटसी सारा खोट = सभी दोष दूर होंगे।

४१) पोट = गठरी, बंडल

जैसे – सुद्ध धरम री पोट= शुद्ध धर्म का बंडल (भंडार) मिला।

४२) बारुणी = मदिरा

जैसे – लोभ द्वेस री बारुणी = लोभ और द्वेष की मदिरा।

४३) स्वांग = नकली वेष

जैसे – बाबा! सुधर्या स्वांग = बाबा! नकली वेष सुधरा।

४४) बिरधापन = वृद्धावस्था में।

जैसे – बिरधापन मँह सरण दी= वृद्धावस्था में शरण दी।

बाबा दोहा

धरम रतन पायो इसो!

(रचना काल १९५५ – १९६२)

बाबो भल बिरमा बस्यो, अन धन भर्या भँडार।
तीन रतन अनुपम मिल्या, होवण भव स्यूं पार॥

आयो सुबरण भोम पर, बाबो पहलां पोत।
सुबरण पायो मोकळो, मिली धरम री जोत॥

कुण जाणै रुळता कठै, किण गळियां? किण भेस?
अरथ धरम दोनूं मिल्या, बाबा! बिरमा देस॥

ओर देस जा बिणजता, धन तो पाता भोत।
पण बाबा! बिरमा बिना, कठै धरम री जोत?

भगति भाव मिलता घणा, पूजा पाठ अनेक।
सुद्ध धरम मिलतो कठै? बाबा! बुद्ध विवेक॥

धरम बिना ही भटकता, अंतर भर्यां किलेस।
जदि बाबो बसतो नहीं, इण धरती, इण देस॥

बाबा! बिरमा ही मिल्यो, सुद्ध धरम रो सार।
संप्रदाय रै बोझ रो, उतर्यो सिर स्यूं भार॥

सील समाधी ग्यान रा, रतन मिल्या अणमोल।
बाबा! दाळद मिट गया, सुफळ हुयी या खोळ॥

बुद्ध धरम अर संघ पर, स्रद्धा जगी अटूट।
बाबा! मिली बिपस्सना, पीवूं इमरत घूंट॥

काळी कोसां आवियो, पायो कस्ट अनेक।
पोतां तो सुख पाविया, मिली धरम री टेक॥

दर कूंचां दर मंजलां, दर चाल्यो परदेस।
कित बिरमा! कित मुरधरां! जंगळ मंगळ देस॥

सांच धरम स्यूं दूर ही, होता जनम अनेक।
जदि बाबो ना तोड़तो, काळै पाणी रेख॥

धरम भोम पर जनमियो, बाबै रै परताप।
सुफळ जमारो होवियो, मिट्‌या सभी संताप॥

महामुनी री सरण मँह, रतनपुंज सो धाम।
जनमभोम, बाबा! मिली, किसी क सुखद ललाम!!

बाबा! पुन जाग्यो इस्यो, जनम्यो बिरमा देस।
जनम हुयो सद्धरम मँह, कटै करम का क्लेस॥

बाबा! घणी सुहावणी, मां बिरमा री गोद।
च्यारूं फळ उपजै अठै, हिवड़ै उमड़ै मोद॥

बाबा! तेरै कारणै, पायो सुवरण देस।
अन धन रा तोड़ा नहीं, मिलग्यो धरम बिसेस॥

बाबलियो भल बासियो, बिरमा देस सुदेस।
मन रा, तन रा, करम रा, कटसी कंटक क्लेस॥

ई धरती री गोद मँह, भोग्या भोग अनेक।
पण भोग्यो सैं स्यूं बिरल, धरम भोग रस एक॥

चांदी सा चावळ अठै, ई सोनै रै देस।
तीन रतन जगमग जगै, गूंजै बुध संदेस॥

स्वेडगोन मिंदर भलो! बिरमा भलो सुदेस!
बाबा! भली बिपस्सना! भलो बुद्ध उपदेस!!

पायो धरम सुधरम यो, पायो देस सुदेस।
बाबा! पथ पायो इसो, दाळद हुइग्या सेस॥

जदि धरती पर सुरग है, नंदनबन सुरधाम।
तो बाबा! बिरमा जिसो, और न देस ललाम॥

किसी क सुखद सुहावणी, मां बिरमा री गोद।
बाबा! ई गोद्यां पळ्यो, मन मायो ना मोद॥

थे बिरमा भल बासियो, सारा मिटग्या सोक।
बाबा! दोनूं सुधरग्या, लोक और परलोक॥

बाबो! बिरमा बास कर, कर्यो घणो कल्याण।
बुद्ध, धरम री, संघ री, सरण मिली सुख खाण॥

बाबा! चित अर चेतसिक, रूप और निरवाण।
बिन बिरमा कित पावतो, अभिधम्म रो ग्यान॥

बाबा! बिरमा देस रो, धरम परस जो होय।
लोहो तो सोनो हुवै, सोनो पारस होय॥

अन धन जस लिछमी मिली, सुख संपद भंडार।
बाबा! तेरै कारणै, मिल्यो धरम रो सार॥

बाबा! तेरै पुन्य स्यूं, सुफळ हुयी या खोळ।
बुद्ध, धरम अर संघ सा, मिल्या रतन अनमोल॥

तेरो पुन परताप है, वा रै बाबा! वाह।
सुत पोता पड़पोतरां, पड्या धरम री राह॥

बाबा! तेरै पुन्य री, बेल बढ़ी चहुँ ओर।
मीठा मीठा फळ लग्या, फूल खिल्या सब ठोर॥

पांच पीढियां तर गयीं, सांच धरम रै पाण।
आगैनै तिरसी किती! बाबा! पुन्य महान॥

दान सील पालन करां, ध्यान धरां मन धाप।
बाबा! तेरो पुन्य है, तेरो ही परताप॥

अरथ धरम अर काम मिल्यो, मिल्यो मोक्छ रो द्वार।
जनम सुकारथ कर लियो, बाबै रो परिवार॥

बाबा! जागी बंस मँह, सांच धरम री लोय।
पिंड पिंड जगमग जग्यो, बाकी बच्यो न कोय॥

बाबा! ऐसो पथ मिल्यो, सफळ हुयी या खोळ।
जनमां री त्रिस्णा बुझी, पीयो इमरत घोळ॥

सुद्ध धरम ऐसो जग्यो, राग टिकै ना द्वेस।
बाबा! मन निरमळ र वै, र वै न दुख रो लेस॥

पुन्य जग्यो तो धरम स्यूं, होयो मंगळ मेळ।
बाबा! मन रै क्लेस री, कटसी बिस री बेल॥

दुखदायी भवचक्र मँह, बीत्या जनम अनेक।
धन बाबा! दुख-मुक्ति हित, पायो बुद्ध-विवेक॥

बाबा! अंतरजगत मँह, जगी सांच री जोत।
काळस कटग्यी, चित भर्यो, मंगळ ओत परोत॥

धन्यभाग बाबा! मिल्यो, सुद्ध धरम रो ग्यान।
इबकै बंधन टूटसी, पास्यां पद निरवाण॥

बाबा! रैतो भटकतो, लख चोरासी जूण।
होतो प्रमुख प्रधान नित, आटो पाणी लूण॥

बाबा! तेरै पुन्य रो, किसो क मिलग्यो मेळ।
धरम दीप जगमग जगै, बिन बाती बिन तेल॥

देख्या देस दिसावरां, फिर-यो घणा परदेस।
पण बाबा! बिरमा जिसो, मिल्यो न मनहर देस॥

बाबा! बिरमा देस रो, किसो हुयो कल्याण।
बैग्यी गंगा धरम री, जाग्यो साच्चो ग्यान॥

बाबा! आता ही रह्या, पुन्यसील कुळवान।
उत गंगा इत रावती, सहसां बरस प्रमाण॥

बाबा! राज असोक को, होयो धरम प्रसार।
स्वरणभोम निरमळ हुयी, बही धरम री धार॥

बाबा! भला पधारिया, भिक्खू उत्तर सोण।
बाजी भेरी धरम री, गूंज्या चारूं कोण॥

पुन्य धरा पर धरम री, जागी उजळी जोत।
बाबा! कण कण मँह भर्यो, मंगळ ओतपरोत॥

जीवन मँह धार्यो धरम

(रचना काल १९६२ – १९६९)

धन धन धरती धरम री, धन धन सुवरण देस।
धन धन मन री सादगी, धन रंगीलो भेस॥

बाबा! बिरमा देस रा, किसा क सज्जन लोग।
सुख संपद मुरतब दियो, दियो धरम रो भोग॥

ई धरती पर ही मिल्या, अन धन संपद कोस।
बाबा! ओटी सूंपतां, हुवै न मन मँह रोस॥

बिरमा रै परताप ही, पायी संपद भोत।
ईंरी ईंनै सूंपतां, मन मलीन ना होत॥

धन तो आवण जाणियो, धूप छांह रो खेल।
पण बाबा! धन धरम तो, जनम जनम रो मेल॥

बाबा! बिरमा देस रो, गुण गाऊं दिन रैन।
जनमभोम री गोद मँह, मिली सांति सुख चैन॥

ई धरती ही पावियो, बुद्ध ग्यान रो सार।
बाबा! कइँयां भूलस्यूं, बिरमा रो उपकार॥

बाबा! निरमळ धरम को, उमड्यो हियै उछाव।
सरधा अर किरतग्यता, बिमळ भगति रो भाव॥

रोम रोम किरतग हुयो, बिरमा रै उपकार।
बाबा! कदे न भूलस्यूं, बिरमा रो आधार॥

मर्यां मिलै रज रज अठै, हड्डी बोट्टी मांस।
बाबा! जीवत तो रहूं, किरतग अंतिम सांस॥

जदि बाबा! बसणो पड़ै, भारत परलै पार।
अंग अंग रमतो र वै, मां बिरमा रो प्यार॥

ऊंची लहर्यां ऊछळै, बाबा! समदर बंग।
उत गंगा इत रावती, हिल मिल भरै उमंग॥

बाबा! बिरमा देस रो, मंगळ ह्वै भरपूर।
या ही र वूं मनावतो, पास र वूं या दूर॥

जन जन नै बांटूं धरम!

(रचना काल १९६९ – ...)

धन पळ! धन छिण! धन घड़ी! धन दिन अर धन रैन!
बाबा! बिरमा देस मँह, मिल्यो परम सुख चैन॥

किसो क चाख्यो धरम रस, छूट गया रस ओर।
बाबा! सुख समता जिसो, दिसै न कोई ठोर॥

बाबा! तेरो रिण घणो, है उपकार अनंत।
धरम देस बास्यो इस्यो, हुयो समागम संत॥

बाबा! बिरमा ही मिल्यो, गुरुवर संत सुजान।
सुद्ध धरम ऐसो मिल्यो, हुयो परम कल्याण॥

बाबा! बिरमा देस मँह, संत मिल्यो अनमोल।
भवदुख प्यासै जीव नै, इमरत दीन्यो घोळ॥

बाबा! मुरधर भटकतां, रयो बिकळ गुमराह।
गुरुवर सरवर सो मिल्यो, इमरत भर्यो अथाह॥

मानव जीवन रतन सो, हो ज्यातो बरबाद।
बाबा! जो न चखावतो, गुरुवर इमरत स्वाद॥

बारै बारै भटकतां, जीवन रह्यो गँवाय।
बाबा! धन! गुरुवर मिल्यो, अंतर दियो दिखाय॥

बाबा! अंतरजगत मँह, बही धरम रस धार।
रूखो सूखो चित चमन, होय उठ्यो गुलजार॥

बियाबान बन भटकतां, हुयो किसो गुमराह।
बाबा! पायो धरम पथ, गुरुवर पकड़ी बांह॥

बाबा! धन! गुरुवर मिल्यो, करुणा रो भंडार।
आंधै नै आंख्यां मिली, सांच धरम रो सार॥

धरम नीर, बाबा! धुल्यो, चित को मैलो चीर।
मिटग्यी देखत देखतां, तन री मन री पीर॥

खातां पीतां रैन दिन, मिटी भूख ना प्यास।
बाबा! चाख्यो धरम रस, मिटी जीव री त्रास॥

गुरुवर समदर सो मिल्यो, रतनाकर गंभीर।
तीन रतन, बाबा! दिया, दूर करण भव पीर॥

मन मदमत्त गयन्द सो, बाबा! बस ना आय।
संत महावत सो मिल्यो, अंकुस दियो लगाय॥

जीव डुबकियां खा रह्यो, भव सागर रै बीच।
धन बाबा! गुरुवर मिल्यो, लियो बांह भर खींच॥

जदि गुरुवर मिलतो नहीं, धरम गंग रै तीर।
बाबा! गंगा पूजतो, पण पीतो ना नीर॥

बिरथा जीवन खोवतो, कर चरचा बकवाद।
जदि, बाबा! चखतो नहीं, सुद्ध धरम रो स्वाद॥

मिथ्या पथ पर भटकतो, देतो जनम गँवाय।
बाबा! पथ पायो बिमळ, लीन्यो सफळ बणाय॥

सुख-दुख दुख-सुख भोगतां, रह्यो सदा दिलगीर।
बाबा! मिली बिपस्सना, करै दूर भव पीर॥

आंख्यां पाटी बांध कर, फिरतो गोळ हि गोळ।
ज्यूं तेली रै बैल सो, बाबा! चकरी डोळ॥

बाबा! जदि मिलतो नहीं, गुरुवर बिरमा देस।
तो धन रै जंजाळ मँह, जीवन होतो सेस॥

बाबा! गुरुवर स्यूं मिली, सुद्ध धरम री पोट।
मन रा, तन रा, बचन रा, मिटसी सारा खोट॥

बाबा! सतगुरु री क्रिपा, करुणा स्यूं भरपूर।
खुल्या किवाड़ा धरम रा, अंतराय ह्वै दूर॥

बाबा! सुण गुरुदेव रा, मंगळमय उपदेस।
चल्यो धरम रै पंथ पर, कट्या करम का क्लेस॥

निकमै चिंतन मनन नै, मान रह्यो थो ग्यान।
बाबा! सम्यक गुरु मिल्यो, जाग्यो सम्यक ग्यान॥

पंचसील पालण करूं, धरूं धरम रो ध्यान।
बाबा! पथ ऐसो मिल्यो, जाग्यो अंतरग्यान॥

बढतो जातो भटकतां, भवभय दुक्ख अनंत।
जदि गुरुवर देतो नहीं, बाबा! साचो पंथ॥

रहतो भव भव भटकतो, बंधन बँध्या अजाण।
जदि गुरुवर ना देवतो, बाबा! सम्यक ग्यान॥

दरसन बाद बिवाद हित, करतो बुद्धि-किलोळ।
पण बाबा! पीतो कठै, धरम अमिय रस घोळ॥

धुळती ना मन गंदगी, खुलती ना मन गांठ।
बाबा! जीवन बीततो, करतां पूजा पाठ॥

करतो पूजन अरचना, करतो किरिया कांड।
बूंद न पातो धरम की, रैतो रीत्यो भांड॥

भगती भावावेस रो, चढ्यो रह्यो अग्यान।
बाबा! निरमळ धरम स्यूं, मोड़े हुयी पिछाण॥

ऐसी मिली बिपस्सना, मिटग्या भावावेस।
मिटग्यी मन री जल्पना, मिटग्या मन रा क्लेस॥

जदि बाबा! पातो नहीं, प्रग्या मुक्ती हेत।
मिनख जमारो खोवतो, अणजाण्या अणचेत॥

बाबा! गांठ्यां ही बँधी, पढ पोथ्यां रो ग्यान।
आखर आखर सुळझग्यो, सद्गुरु मिल्यो सुजान॥

हाथ न सूझै हाथ नै, बाबा! घोर अँध्यार।
दिवळो चसग्यो धरम रो, गुरुवर रो उपकार॥

बाबा! सुध बुध खोय दी, पड़ बिसयां रै फेर।
होस जग्यो सद्गुरु क्रिपा, उबरत लगी न देर॥

मन बिसयन रस स्यूं भर्यो, बाबा! नाग भुजंग।
इमरत पी निरबिस हुयो, सद्गुरु रै सतसंग॥

गुरुवर रै परताप स्यूं, खुळग्या ग्यान कपाट।
बाबा! मिलग्यी साधना, निरमळ हुयो निराट॥

काम क्रोध री बाढ़ मँह, डूब रह्यो मझधार।
बाबा! पुन ऐसो जग्यो, गुरुवर लियो उबार॥

बाबा! दूधां घी घणो, काढण की ना रीत।
गुरुवर दियो बिलोवणो, मथ काढ्यो नवनीत॥

धन बाबा! सद्गुरु मिल्यो, प्रग्या दयी जगाय।
दरसन बाद बिवाद री, जकड़न दयी छुड़ाय॥

बाबा! सद्गुरु के मिल्यो, मिलग्यो सुख को मूळ।
सांच धरम री आंच स्यूं, गळग्या दुक्ख समूळ॥

काया चित्त अनित्य है, अंतर जग्यो प्रबोध।
धन बाबा! प्रग्या जगी, होसी दुक्ख निरोध॥

बाबा! अंतरजगत मँह, जगी सांच री जोत।
काळस कटग्यी चित भर्यो, मंगळ ओत परोत॥

बाबा! बढता ही रह्या, तन का मन का रोग।
बिपस्सना ओसध मिली, हुइग्यो सहज निरोग॥

मान मोह माया मिटै, कपट र वै ना क्रोध।
बाबा! बोध अनात्म को, कर दे दुक्ख निरोध॥

बाबा! मन मैलो कर्यो, दुखी रह्यो दिन रैन।
अब बिपस्सना स्यूं धुल्यो, मिली सांति सुख चैन॥

लोभ द्वेस री बारुणी, चढी मोह री भांग।
जाग्यो प्रग्या होस जद, बाबा! सुधर्या स्वांग॥

पढ पोथ्यां चिंतन कर्यो, भर्यो गरब मगरूर।
बाबा! मिली बिपस्सना, हुइग्यो दूर गरूर॥

करतो रह्यो गुमान स्यूं, मिथ्या बाद बिवाद।
धन बाबा! पायो धरम, तो ही चाख्यो स्वाद॥

बाबा! बढतो ही रह्यो, अंतर दुख परपंच।
धन्यभाग प्रग्या जगी, दुक्ख रह्यो ना रंच॥

बाबा! बारै भटकतां, सुख रो मिल्यो न नाम।
ज्यूं भीतर निरखण लग्यो, मिल्यो परम सुख धाम॥

किसो धरम रो बळ प्रबल! किसो क धरम प्रभाव।
बाबा! अब संसय कटै? पार लागसी नाव॥

बाबा! गुरु ऐसो मिल्यो, जीं को प्रबल प्रताप।
जन जन मँह जागै धरम, दूर हुवै भवताप॥

पारस परसै लोह नै, सुवरण देय बणाय।
बाबा! गुरुवर लोह नै, पारस दियो बणाय॥

बाबा! बिरमा ही मिली, बुध बाणी अनमोल।
आकळ ब्याकळ प्राण नै, दी संजीवन घोळ॥

जैंया मेरा दिन फिर्या, सैं का दिन फिर ज्याय।
बाबा! जागै धरम जग, जन मन दुख कट ज्याय॥

धरम रतन भेळो कर्यो, मां बिरमा री गोद।
इब भारत नै बांटतां, मन मावै ना मोद॥

करी कमाई मोकळी, बाबा! बिरमा देस।
बांटत बांटत बांटतां, कटै जगत का क्लेस॥

धरम संपदा बांटतां, बाबा! कम ना होय।
दिन दिन दूणी ही हुवै, रात चोगुणी होय॥

जद जद बांटू धरम रस, याद पाछली आय।
बाबा! बसग्यो द्वारका, ब्रज मन बिसरै नाय॥

बाबा! भूल न पावस्यूं, जनम मिल्यो जीं देस।
सुद्ध धरम पायो जठै, कट्या करम का क्लेस॥

जनम मिल्यो जीं देस मँह, धरम मिल्यो जीं देस।
बाबा! कदे न भूलस्यूं, बिरमा मंगळ देस॥

बाबा! भलो मनावसूं, जद तक तन मँह प्राण।
जनमभोम रो रिण चुकै, किरतगता रै पाण॥

रोम रोम किरतग हुयो, रिण न चुकायो जाय।
मंगळ रऊं मनावतो, बाबा! यो हि उपाय॥

बाबा! जीं स्यूं सुख मिल्यो, सुखी र वै बो देस।
धरम दीप दीपत र वै, अँधियारो ह्वै सेस॥

बाबा! बिरमा देस रो, सब बिध मंगळ होय।
अन धन रो, सुख सांति रो, सतत बधावो होय॥

बाबा! बिरमा देस रा, सुखी र वै सै लोग।
दूर र वै दुरभिक्ख दुख, दूर र वै सै रोग॥

बिरधापन मँह सरण दी, भारत उजळो देस।
धरम दूत री छूट दी, फळै फुलै यो देस॥

बरमा भारत देस रा, होवै लोग निरोग।
बाबा! मेरै पुन्य रा, फळ भोगै सै लोग॥

भारत बिरमा देस रो, सदियां रो संबंध।
सदा महकतो ही र वै, बाबा! यो मकरंद॥

भारत बिरमा देस रो, बढज्या मेळ मिलाप।
दोनूं ही सुख स्यूं र वै, बाबा! धरम प्रताप॥

गंगा और इरावदी, बवै धरम रो नीर।
बाबा! जनमन दुख मिटै, दूर हुवै भव पीर॥

निरमळ गंगा धरम री, सतत प्रवाहित होय।
बाबा! सैं को हो भलो, सैं को मंगळ होय॥

बाबा! तूं सुरलोक मँह, खण खण हरखित होय।
तेरी छत्तर छांह मँह, पोतो पुलकित होय॥

गुरुवर! तू सुरलोक मँह, खण खण हरखित होय।
तेरी छत्तर छांह मँह, पुत्तर पुलकित होय॥

याद करूं बाबा! तनै, हिवड़ै उठै हिलोर।
ज्यूं आभै सूरज उगै, उजळो प्रगटै भोर॥

याद करूं गुरुवर तनै, हिवड़ै उठै हिलोर।
ज्यूं आभै सूरज उगै, उजळो प्रगटै भोर॥

मैरे अरजित पुन्य मँह, बाबो भागी होय।
धरमदूत री चारिका, बाबै रै हित होय॥

मैरे अरजित पुन्य मँह, गुरुवर भागी होय।
धरमदूत री चारिका, गुरुवर रै हित होय॥

द्रिस्य और अद्रिस्य सै, प्राणी सुखिया होय।
मैरे अरजित पुन्य मँह, भाग सभी को होय॥

जळ का, थळ का, गगन का, प्राणी सुखिया होय।
मैरे अरजित पुन्य मँह, भाग सभी को होय।

दसूं दिसावां का सभी, प्राणी सुखिया होय।
मैरे अरजित पुन्य मँह, भाग सभी को होय॥

सैं को मंगळ होय!
सैं को मंगळ होय!!
सैं को मंगळ होय!!!

बाबा-दोहे

राजस्थानी दोहों का अनायास सृजन हुआ। उनमें से कुछ का सायास हिंदीकरण हुआ।

असीम उपकार है,
अनंत अनुग्रह है,
बाबा! कैसे उऋण हों,
हम तेरे ऋण से?
धर्मदेश वास किया,
मिलन हुआ धर्म से,
उस महान संत से,
गुरु ऊ बा खिन से॥ १॥

बाबा! तेरे पुण्य का,
हमको भी लाभ मिला,
सुख मिला, वैभव मिला,
धर्म का शबाब मिला।
तीन उपहार मिले,
बुद्ध, धर्म, संघ जैसे,
अनमोल रत्न मिले॥ २॥

दर दर की खाक छानी,
जरा न थकान मानी,
गली गली कूचे कूचे,
लंबी लंबी मंजिलों का,
सफर किया बाबा ने,
कहां अन्न, कहां पानी?
वहां देश मरुधर है,
यहां देश ब्रह्म है।
लंबी मुसाफिरी की,
कष्टमयी कहानी,
हमने सुनी थी कभी,
बाबा की जुबानी॥ ३॥

कैसे कष्ट भोगे बाबा!
दुर्गमन मार्गों की,
कोसों की यात्रा की,
धर्मदेश आवास मिला।

पर तेरे कष्टों का,
पोतों को फल मिला,
कैसा सुख सार मिला,
रत्न भंडार मिला,
धर्म का आधार मिला॥ ४॥

भटकते ही रहते बाबा!
अंतर में क्लेश भरे,
दुख दैन्य द्वेष भरे,
यदि तुम बसते नहीं,
इस पुण्य देश में!
पावन प्रदेश में,
धर्म परिवेश में!! ५॥

कैसी मिली जन्मभूमि,
राजधानी बर्मा की,
महाम्या मुनि की छाया,
शीतल सुहावनी,
रत्नपुंज धर्म धाम,
कैसा सुखद ललाम!! ६॥

बाबा! तेरे कारण ही,
पाया यह धर्म देश,
अन्न धन स्वर्ण का,
वैभव विभूति का,
रंच ना अभाव जहां।
भाव जहां धर्म का,
सात्विक सत्कर्म का॥ ७॥

व्यापार तो करते हम,
जहां जा बसते तुम।
व्यापार में लक्ष्मी का
आवास तो पाते ही,
धन तो कमाते ही,
लेकिन ब्रह्मदेश छोड़,
अन्य किस देश में,
बाबा! कहां पाते हम,
दिव्य ज्योति धर्म की,
सलिला सत्कर्म की? ८॥

कैसे गुण गायें हम,
बाबा! तेरे पुण्य का,
कर्म कौशल्य का।
लिए धर्म-आधार,
तर गईं पीढ़ी चार,

और अब अनागत में,
होवेंगी कितनी पार,
चिंतन कर बार-बार,
मानस में उर्मिल है,
खुशियों का वारापार॥ ९ ॥

बाबा! तेरे पुण्य की,
शील सौजन्य की,
क्यारी खिली धर्म की,
दिव्य धन धान्य की,
बेल बढ़ी वंश की।
फूल खिले ठौर-ठौर
फल लगे सभी ओर,
कैसी रस माधुरी है,
सौरभ सुवास की!! १० ॥

कैसा तेरा पुण्य बाबा!
कैसा प्रताप है!
दान देवे श्रद्धा से,
शील पालें दृढ़ता से,
करते नित साधना,
मिटते भवताप हैं॥ ११ ॥

बाबा! तेरे मंगल की,
गाथा गाएं पुण्य की,
बेटों में, पोतों में,
और पड़पोतों में,
ज्योत जगी धर्म की,
लगन सत्कर्म की॥ १२ ॥

भले बसे बाबा! तुम,
सुंदर सुदेश में,
भव्य ब्रह्मदेश में,
अब नहीं जाए मन,
अब नहीं जाए तन,
और न जाए वचन,
कल्मष में, क्लेश में॥ १३ ॥

होते न निर्भीक तुम,
तोड़ते न लीक तुम,
काला पानी पार कर,
बर्मा न आते तुम।
भले सुख भोग तो,
पाते भरपूर ही,
पर जन्म होता बाबा!
सद्धर्म से दूर ही॥ १४ ॥

बाबा! परिवार तेरा,
कृतार्थ हो गया!
अर्थ मिला, धर्म मिला,
काम मिला, मोक्ष मिला,
चारों फल प्राप्त कर,
सिद्धार्थ हो गया॥ १५॥

इस धरती मैय्या की,
सुखद सुगोद में,
अंचल की छाया में,
भोगे अनेक भोग,
लेकिन जब भोगा मधुर,
सद्धर्म का रस भोग,
हो गये सर्वथा,
अभय तथा अशोक॥ १६॥

चांदी से चावलों का,
सोने का देश है,
जगमगाते तीन रत्न,
धन्य ब्रह्मदेश है!
प्रकृति प्रफुल्ल है,
धर्म परिवेश है,
अणु अणु में गूंज रहे,
बुद्ध संदेश हैं॥ १७॥...

अर्थ मिला, धर्म मिला,
जन्म-फल पा लिया,
कौन जाने और कहां,
कैसी अंध गलियों में,
पीड़ित हो रुळते हम,
भूले भटकते हम,
बाबा! इस देश में,
जीवन सफल हुआ,
राजपथ पा लिया॥ १८॥

बाबा! ब्रह्मवास किया,
कैसा कल्याण किया!
धरती महान मिली,
सुख की निधान मिली,
बुद्ध धर्म संघ जैसे,
रत्नों की खान मिली॥ १९॥

बाबा! कैसी प्रभा फैली,
तेरे शुभ कर्म की,
पिंड-पिंड जाग उठी,
दिव्य ज्योत धर्म की।
इस पुण्य सलिला में,
सब कुटुंब नहायेगा,

एक भी न प्राणी कहीं,
सूखा रह पायेगा॥ २०॥

उस ओर गंगा है,
इस ओर इरावदी,
बहती ही रही बाबा!
पुण्यधार बलवती।
आते ही रहे बाबा!
कुल-पुत्र पुण्यशील,
लाते रहे करुणा की,
धर्मधार भगवती॥ २१॥

देशों में दिव्य देश,
ब्रह्मदेश भला है,
मंदिरों में पावन है,
श्वेडगोन भला है,
भली है, सुमंगल है,
तथागत की देशना,
बाबा! कितनी भली है,
यह साधना विपश्यना!! २२॥

देश सुदेश पाया,
धर्म सुधर्म पाया,
रत्नों में रत्न पाया,
दुखों के कारण-निवारण
- का मार्ग पाया।
ऐसा पथ पाया बाबा!
आर्यों का श्रेष्ठतम,
दूर हुए दैन्य दुख,
अंधकार निबिड़तम॥ २३॥

धन्य धन्य देश यह स्वर्णमय!
धन्य धन्य धरती यह धर्ममय!
धन्य धन्य लोग इस देश के!
मानस तो पावन है,
स्वच्छ श्वेत हिम सदृश,
लेकिन क्या कहने हैं,
रंगीले भेष के॥ २४॥

मणिभरे माणिकभरे,
पन्ने जवाहरभरे,
इस रत्नगर्भा की,
गोद जगमग करे।
रत्नभरे थल-तल में,
फलमूल तरु-तृण में,

खेत खलिहान,
धनधान्य से हरे भरे,
ऐसी भाग्यशालिनी,
यह बर्मी वसुंधरा।
लेकिन अनमोल तो,
धर्मरत्न की प्रभा,
जिसे पा निहाल हुई,
पुण्यवती धर्मधरा॥ २५॥

धर्म के नाम पर,
मिलता भक्ति भावावेश,
प्रार्थनाएं, वंदनाएं
कामनाएं, ही अशेष।
बाबा! ब्रह्मदेश बिन,
मिलता बताओ कहां?
शुद्ध धर्म, बोधिग्यान,
प्रज्ञा-रश्मि मूर्तिमान,
कैसे दूर कर पाते,
जन्मों का कलुष-क्लेश? २६॥

पाया इस धरती पर,
परम शुद्ध धर्म सार,
छूट गये फूटे पात्र,
छिलके खोखले असार,
बाबा! न चुका सकेंगे,
बर्मा का ऋण कभी,
कैसे भूल पाएं
जन्मभूमि के उपकार!! २७॥

बाबा! कोई भाग्यवान,
ब्रह्मदेश में बसे,
स्पर्श पा जाय,
यहां शुद्ध सद्धर्म का।
लोहे का बना हो तो,
सोना बन जाय खरा,
सोने का बना हो तो,
पारस अनमोल बने॥ २८॥

बसा भला बर्मा में
बाबा! तू पुण्य-श्लोक,
हो गयी निहाल तेरी–
संतति, हुई अशोक।
पाया ऐसा धर्मरत्न,
दारिद्र सब दूर हुए,
सुधर गये दोनों ही,
इहलोक, परलोक॥ २९॥

मुक्त स्वच्छन्द हुआ,
स्वस्थ निर्द्वन्द हुआ,
बाबा! ब्रह्मदेश में,
ऐसा धर्म तत्त्व मिला,
दुख दैन्य दारिद्र से,
पूर्ण निर्बन्ध हुआ।
प्राण-प्राण सांस-सांस,
मानते इसका आभार,
इसके हितसुख में,
भले कट जाय तन,
बोटी-बोटी, मांस मांस॥ ३०॥

यदि कहीं धरती पर,
जन्नत है, स्वर्ग है,
दिव्य लोक रमणीय,
सुरम्य सुरधाम है!
तो बाबा! सच ही वह,
बर्मा है, बर्मा है।
बर्मा ही नंदनवन,
सुंदर ललाम है॥ ३१॥

बाबा! पुण्य कर्मों का,
कैसा संयोग हुआ,
बर्मा में जन्म हुआ,
भौतिक सुखभोग हुआ,
संगत मिली संत की,
साधना विपश्यना,
दूर इस जीवन का,
सारा शोक रोग हुआ॥ ३२॥

बाबा! मैं तो घूमता
रहा ही परदेश में,
जग देखा,
जगत की रीति देश-देश में,
मुझे तो मिला नहीं,
ऐसा पुण्यदेश कहीं,
जहां जी रहा हो धर्म,
जैसे ब्रह्मदेश में॥ ३३॥

बाबा! जम्बू द्वीप में
भारत भूखंड में,
जागी धर्म सुरसरी,
अशोक नृप चंड में।
धन्य निज नाम हुआ –
प्रिय देवानाम हुआ।

धरती का ओर छोर,
हुआ धर्म से विभोर।
ब्रह्मदेश विमल हुआ,
परम पुण्यधाम हुआ,
दान शील भावना,
जागी पिंड पिंड में॥ ३४॥

भले पधारे बाबा!
सोण और उत्तर,
अरहंत सिरोमणि,
धर्मदूत धर्मधर
गूंज उठी ठौर-ठौर
सद्धर्म की भेरियां
शांति समृद्धि बनी,
कैसी क्रीत चेरियां॥ ३५॥

भौतिक धन संपदा,
आती है, जाती है,
यह ज्वार भाटे का,
नाटक दिखाती है।
कभी धूप, कभी छांह,
कभी वास महलों का,
कभी कंकरीली राह।

लेकिन जो धर्म मिला,
बाबा! इस देश में,
वह तो सुमंगल है,
आदि मध्य अंत तक,
इह लोक, परलोक,
जन्म-जन्मांतरों में,
मुक्ति निर्वाण तक,
हारे थके मानव की,
उत्तम शरण पनाह॥ ३६॥

बाबा! बुद्ध देश की,
अर्जित सब संपदा,
कितनी सुमंगला,
सुखदा रही सदा।
जितनी भी संचित की,
इसी की देन है,
इसी की धरोहर है,
इसी को सौंपते,
चित्त नहीं दीन है।
मन ना मलीन है॥ ३७॥

यहीं तो कमाई बाबा!
भौतिक सुख संपदा,
सारा धन वैभव है,
दायद स्वदेश का।
यहीं का अर्जन है,
यहीं पर विसर्जन है,
क्लेश काहे तन में?
द्वेष काहे मन में?
इसी देश की उपज,
इसी को समर्पण है॥ ३८॥

इधर मां इरावदी,
उधर बह रही है गंग,
दोनों के संगम से,
पावन समुद्र बंग।
मिलन ब्रह्म-भारत का,
नूतन पुरातन का,
दीपक की बाती से,
ज्योति के किरण का।
सागर की खुशियों का,
बाबा! कहीं अंत नहीं,
पुलकित है अंग-अंग,
उच्छल है जल तरंग॥ ३९॥

बाबा! यदि काल-चक्र,
ऐसा कोई मोड़ दे,
और बस जाना पड़े,
उस पार हिंद देश में।
अंतर में बर्मा का,
प्यार नित अमिट रहे,
जहां रहे, जैसे रहे,
जिस परिवेश में॥ ४०॥

भले स्थितिवश,
परवश, कालवश हो,
छोड़ जन्मभूमि
उस ओर रहना पड़े,
भले संयोगवश,
ऊधो इस कान्ह को,
छोड़ निज देश,
द्वारिका बसना पड़े।
याद न भुलाए,
सुधि बार-बार आए,
ऊधो मेरे मन ब्रज,
कभी विसर न पाए॥ ४१॥

श्रेष्ठ धर्म संग आया,
अमूल्य उपहार लाया,
धरती के अंग अंग,
अणु अणु में मोद छाया,
सदियों के बाद आज,
कैसा सुयोग आया!
बाबा के वंशज पर,
कैसा सौभाग्य छाया,
धर्म ऋण चुकाने का,
पावन दायित्व पाया॥ ४२॥

बाबा! जब याद करता,
मेरे ब्रह्मदेश को,
पावन प्रदेश को,
कृतज्ञता से सिहर उठता,
पुलक पुलक उठते प्राण,
कैसे भला जान पाता?
कैसे समझ पाता?
गहन गंभीर इन,
चारों परम सत्यों को।
चित्त और चैतसिक,
रूप और निर्वाण,
कैसे भला पाता जान?
यह अभिधर्मज्ञान,
दुक्खहारी, सुखनिधान॥ ४३॥

बाबा! मेरा रोम-रोम,
मैत्री में रत रहे,
मातृभूमि बर्मा का,
मंगल भरपूर हो!
कल्याण भावना से,
सदा मन परिपूर्ण रहे,
चाहे हम पास हों,
चाहे हम दूर हों!! ४४॥

जीवन दुपहरी
बितायी ब्रह्मदेश में,
कैसी धर्मसंपदा
कमायी ब्रह्मदेश में,
यह तो विरासत थी,
भारत की अपनी,
भोलेपन में गयी,
भुलायी इस देश में।
बुद्ध धर्म देशना,
सुमंगली विपश्यना,

दोनों हस्त मुक्त से,
मन मोद युक्त से,
कमायी ब्रह्मदेश की,
लुटायी हिंद देश में॥ ४५॥

बर्मा के ऋण से,
अंतर आभारी है,
कृतज्ञ है रोम रोम,
पुलकित सुखकारी है।
भूलें भला कैसे बाबा!
बर्मा का उपकार,
जहां मिला बोधि-ज्ञान,
जहां मिला धर्म-सार,
कैसे भूलें उसे,
जिसने जिंदगी सुधारी है॥ ४६॥

विपश्यना की तपोभूमियां

अब तक भारत तथा विश्व भर में विपश्यना के ९१ केंद्र स्थापित हो चुके हैं तथा और नये-नये केंद्र स्थापित होते जा रहे हैं।

प्राचीन भारत में अनेकों तपोवन थे, उसके पावन वातावरण में, त्रिविध शील का पालन करते हुए मन को शुद्ध, निर्मल करने के लिए ध्यान तपस्या करते थे, आज बड़े जोरों से इसी की पुनरावृत्ति हो रही है।

इन ध्यान केन्द्रों के विवरण नीचे दिये जा रहे हैं।

धम्म गिरि इगतपुरी, महाराष्ट्र (मुख्य ध्यान केंद्र)

धम्म तपोवन इगतपुरी, (दीर्घ शिविरों के लिए)

धम्म अजन्ता औरंगाबाद, महाराष्ट्र

धम्म मनमोद मनमाड, महाराष्ट्र

धम्म नासिका नासिक, महाराष्ट्र

धम्म सरोवर धुले, महाराष्ट्र

धम्मालय कोल्हापुर, महाराष्ट्र

धम्म नाग नागपुर, महाराष्ट्र

धम्म सुगति सुगत नगर (नागपुर), महाराष्ट्र

धम्म सरिता खड़ावली, थाने (मुंबई के समीप)

धम्म पुण्ण पूना शहर, महाराष्ट्र

धम्मानन्द पूना, महाराष्ट्र

धम्म पतिट्ठान पैठण, महाराष्ट्र की खुली जेल

धम्म थली जयपुर, राजस्थान

धम्म सोत दिल्ली के पास सोहना (हरियाणा)

धम्म तिहाड़ दिल्ली की केंद्रीय कारागार

धम्म रक्खक दिल्ली (पुलिस अकादमी में)

धम्म कारुणिक करनाल जिला, हरियाणा

धम्म पट्ठान कम्मासपुर, हरियाणा (गम्भीर दीर्घ शिविरों के लिए)
धम्म धज होशियारपुर, पंजाब
धम्म सिखर धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश
धम्म सलिल देहरादून, उत्तरांचल
धम्म चक्क सारनाथ, उत्तर प्रदेश
धम्म लक्खन लखनऊ, उत्तर प्रदेश
धम्म सुवत्थि श्रावस्ती, उत्तर प्रदेश
धम्म विमुत्ति कुशीनगर, उत्तर प्रदेश
धम्म सिन्धु बाड़ा, मांडवी, कच्छ-गुजरात
धम्म पीठ अमदाबाद, गुजरात
धम्म कोट राजकोट, गुजरात
धम्म दिवाकर मेहसाणा, उत्तरी गुजरात
धम्म वट वडोदरा के समीप, गुजरात
धम्म खेत्त हैदराबाद, आंध्र प्रदेश
धम्म निज्झान निजामाबाद, आन्ध्र प्रदेश
धम्म विजय विजयराय गांव, आंध्र प्रदेश
धम्माराम भीमावरम, आंध्र प्रदेश
धम्म सुमन बैंगलोर, कर्नाटक
धम्म सेतु चेन्नई (मद्रास) तमिलनाडु
धम्म कानन बालाघाट, मध्य प्रदेश
धम्म केतु भिलाई, दुर्ग, छत्तीसगढ़
धम्म पाल भोपाल, मध्य प्रदेश
धम्म बल जबलपुर, मध्य प्रदेश
धम्म लिच्छवी मुजफ्फरपुर, बिहार
धम्म उपवन बाराचकिया, बिहार
धम्म बोधि बोधगया, बिहार
धम्म गङ्गा कोलकाता, पश्चिम बंगाल

विदेशों में :---

धर्म श्रृंग काठमण्डू, नेपाल

धम्म जननी लुम्बिनी, नेपाल

धम्म तराई बीरगंज, नेपाल

धम्म बिराट बिराट नगर, पूर्वी नेपाल

धम्म मण्डप मांडले, म्यंमा

धम्म मण्डल मांडले, म्यंमा

धम्म जोति रंगून (यांगों) म्यंमा

धम्म रतन मोगोक, म्यंमा

धम्म मकुट मोगोक, म्यंमा (बहुत सुंदर स्थान)

धम्म महिमा मेम्यो, म्यंमा

धम्म कमल प्राचिंपुरी, थाईलैंड

धम्म आभा फिस्नुलोक, थाईलैंड

धम्म कञ्चन कंचनपुरी, थाईलैंड

धम्म कम्बोज कम्बोडिया

धम्म अङ्कुर कम्बोडिया

धम्म लट्ठिका कम्बोडिया

धम्म जावा इंडोनेशिया

धम्म कूट पेराडेनिया, श्रीलंका

धम्म दीप हरेफोर्डशायर, इंगलैंड

धम्म मही शैम्पिलियन, फ्रांस

धम्म निलय सेट्स, फ्रांस

धम्म सुमेरु स्विटजरलैंड

धम्म नेरु बारसीलोना, स्पेन

धम्म पज्जोत दिल्सेन के पास, बेल्जियम

धम्म अटल इटली के उतरी भाग में

धम्म द्वार जर्मनी

धम्म भूमि सिडनी के पास, ब्लैकहीथ, आस्ट्रेलिया

धम्म पभा तस्मानिया, आस्ट्रेलिया
धम्म आलोक विक्टोरिया, आस्ट्रेलिया
धम्म रस्मि क्वींसलैंड, आस्ट्रेलिया
धम्म निकेतन एडीलेड, दक्षिण आस्ट्रेलिया
धम्म पदीप पर्थ के पास, आस्ट्रेलिया
धम्म मेदिनी कौकापकापा, न्यूजीलैंड
धम्म भानु जापान
धम्मोदय ताईवान
धम्म मङ्गल मंगोलिया
धम्म मकरन्द मैक्सिको, लैटिन अमेरिका
धम्म सन्ति ब्राजील, दक्षिण अमेरिका
धम्म पताका दक्षिण अफ्रीका
धम्म सुरभि ब्रिटिश कोलंबिया, कनाडा
धम्म सुत्तम क्यूबेक, कनाडा
धम्म धरा मेस्सेचुसेट्स, अमेरिका
धम्म महावन नार्थफोर्क, (कैलीफोर्निया) अमेरिका
धम्म कुञ्ज वाशिंग्टन, अमेरिका
धम्म सिरि डल्लास, टेक्सास अमेरिका
धम्म पकास शिकागो, अमेरिका

इसरायल में विपश्यी साधक एक वर्ष के लिए किराये का एक स्थान लेकर शिविर लगा रहे थे, अब तीन वर्ष के लिए जो स्थान लीज पर लिया है, बहुत मँहगा है परन्तु इसमें स्थायी केंद्र की तरह पूरी सुविधा है। यहां हर माह २ शिविर लगते हैं और हर शिविर में ७०-७५ साधक बैठते हैं। शीघ्र ही स्थाई केंद्र बनाए जाने का प्रयत्न चल रहा है।

सब का मंगल हो!

विपश्यना साहित्य

हिंदी

• निर्मल धारा धर्म की - (पांच दिवसीय प्रवचन)	रु. ५५/-
• प्रवचन सारांश (शिविर-प्रवचन)	रु. ४५/-
• जागे पावन प्रेरणा	रु. ८०/-
• जागे अंतर्बोध	रु. ५०/-
• धर्मः आदर्श जीवन का आधार	रु. ४०/-
• तिपिटक में सम्यक संबुद्ध, भाग-२	रु. १३०/
• धारण करे तो धर्म	रु. ७०/-
• क्या बुद्ध दुक्खवादी थे?	रु. ३५/-
• मंगल जगे गृही जीवन में	रु. ४०/-
• धम्मवाणी संग्रह (पालि गाथाएं एवं हिंदी अनु.)	रु. ४०/-
• विपश्यना पगोडा स्मारिका	रु. १००/-
• सुत्तसार भाग १ (दीघ एवं मज्झिम निकाय)	रु. ९५/-
• सुत्तसार भाग २ (संयुत्तनिकाय)	रु. ५०/-
• सुत्तसार भाग ३ (अंगुत्तर एवं खुद्दकनिकाय)	रु. ४५/-
• धन्य बाबा!	रु. ३५/-
• कल्याणमित्र सत्यनारायण गोयन्का (व्यक्तित्व और कृतित्व)	रु. ५०/-
• पातंजल योगसूत्र	रु. ५०/-
• आहुनेय्य, पाहुनेय्य, अंजलिकरणीय - डॉ. ओम प्रकाश जी	रु. ३०/-
• राजधर्म [कुछ ऐतिहासिक प्रसंग]	रु. ३५/-
• आत्म-कथन भाग-१	रु. ३५/-
• लोक गुरु बुद्ध	रु. १०/-
• देश की बाह्य सुरक्षा	रु. ०५/-
• गणराज्य की सुरक्षा कैसे हो!	रु. ०६/-
• शाक्यों और कोलियों के गणतंत्र का विनाश क्यों हुआ?	रु. १०/-
• अंगुत्तर निकाय, भाग-१	रु. १००/-
• केंद्रीय कारागृह जयपुर, विपश्यना का प्रथम जेल शिविर	रु. ३०/-
• विपश्यना : लोकमत भाग-१	रु. ५५/-
• विपश्यना : लोकमत भाग-२	रु. ४५/-
• अग्रपाल राजवैद्य जीवक	रु. २०/-
• मंगल हुआ प्रभात (हिंदी दोहे)	रु. ५५/-
• पथ-प्रदर्शिका	रु. २/-
• विपश्यना क्यों?	रु. १/-
• सम्राट अशोक के अभिलेख	रु. ५०/-
• आचार्य श्री सत्यनारायणजी गोयन्का का संक्षिप्त जीवन-परिचय	रु. २०/-
• अहिंसा किसे कहें?	रु. १५/-
• लकुण्डक भद्दिय	रु. १०/-
• गौतम बुद्धः जीवन-परिचय और शिक्षा	रु. २५/-
• भगवान बुद्ध की साम्प्रदायिकता-विहीन शिक्षा	रु. १०/-
• बुद्ध-जीवन-चित्रावली	रु. ३३०/-
• भगवान बुद्ध के अग्रश्रावक महामोग्गल्लान	रु. ३५/-
• क्या बुद्ध नास्तिक थे?	रु. ८५/-
• तिपिटक में सम्यक संबुद्ध, (६ भागों में) भाग-१ रु. ४५/-, भाग-२ रु. ५०/-, भाग-३ रु. ५५/-, भाग-४ रु. ४५/-, भाग-५ रु. ४५/-, भाग-६ रु. ५५/-	
• महामानव बुद्ध की महान विद्या विपश्यना का उद्गम और विकास (११६ चित्रों का संग्रह) सजिल्द	रु. ६२५/-
• भगवान बुद्ध के महाश्रावक महाकस्सप (धुतांगधारियों में 'अग्र')	रु. ४०/-
• महामानव बुद्ध की महान विद्या विपश्यना का उद्गम और विकास	रु. १४५/-
• भगवान बुद्ध के अग्रउपासक अनाथपिण्डिक	रु. ५०/-
• भगवान बुद्ध की अग्रश्राविका किसागोतमी	रु. ३०/-
• चित्त गृहपति एवं हत्थक आळवक	रु. ३०/-
• खुशियों की राह	रु. १५०/-
• विसाखा मिगारमाता	रु. ३५/-
• मगधराज सेनिय बिम्बिसार	रु. ४५/-
• बुद्धसहस्सनामावली (पालि एवं हिंदी)	रु. ३५/-
• आनन्द – भगवान बुद्ध के उपस्थाक	रु. १२०/-
• जीने की कला	रु. ७०/-
• परम तपस्वी श्री रामसिंह जी	रु. ५५/-
• भगवान बुद्ध की अग्रउपासिकाएं खुज्जुत्तरा एवं सामावती तथा उत्तरानन्दमाता	रु. २५/-
• विपश्यना पत्रिका संग्रह भाग - १	रु. ८०/-
• विपश्यना पत्रिका संग्रह भाग - २	रु. ७५/-
• आदर्श दंपति नकुलपिता एवं नकुलमाता	रु. २५/-

• तिक-पट्ठान (संक्षिप्त रूपरेखा)	रु. ३५/-
• १२ हिंदी पुस्तिकाओं का सेट	रु. १४/-
• धम्म-वंदना (पालि गाथाएं, हिंदी अनुवाद)	रु. ४५/-
• धम्मपद (संशोधित हिंदी अनुवाद सहित)	रु. ४५/-
• महासतिपट्ठानसुत्त (समीक्षा एवं भाषानुवाद)	रु. ५५/-
• महासतिपट्ठानसुत्त (भाषानुवाद)	रु. ३५/-
• बुद्धगुणगाथावली (पालि)	रु. ३०/-
• बुद्धसहस्सनामावली (पालि)	रु. १५/-
• प्रारंभिक पालि	रु. ८५/-
• प्रारंभिक पालि की कुंजी	रु. ५०/-
• जागो लोगां जगत रा (राजस्थानी दूहा)	रु. ४५/-
• परिभाषा धरम री (राजस्थानी)	रु. १०/-
• ५ राजस्थानी पुस्तिकाओं का सेट	रु. ५/-
• विश्व विपश्यना स्तूप का संदेश (हिंदी, मराठी, अंग्रेजी)	रु. १०/-

मराठी

• जगण्याची कला	रु. ७०/-
• जागे पावन प्रेरणा	रु. ८०/-
• प्रवचन सारांश	रु. ४०/-
• धर्मः आदर्श जीवनाचा आधार	रु. ४०/-
• जागे अंतर्बोध	रु. ६५/-
• निर्मळ धारा धर्माची	रु. ४५/-
• महासतिपट्ठानसुत्त (भाषानुवाद)	रु. ३०/-
• महासतिपट्ठानसुत्त (समीक्षा)	रु. ४०/-
• मंगलमय गृहस्थ-जीवन	रु. ३५/-
• भगवान बुद्धाची सांप्रदायिकता-विहीन शिकवणुक	रु. १०/-
• बुद्धजीवन-चित्रावली	रु. ३३०/-
• आनंदाच्या वाटेवर	रु. १५०/-
• आत्म-कथन भाग-१	रु. ५०/-
• अग्रपाल राजवैद्य जीवक	रु. २०/-
• महामानव बुद्धाची महान विद्या विपश्यनाः उगम आणि विकास	रु. १२५/-
• लोक गुरु बुद्ध	रु. ०६/-
• लकुण्डक भद्दिय	रु. १२/-
• प्रमुख विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायणजी गोयंका यांचा संक्षिप्त जीवन-परिचय	रु. १८/-

गुजराती

• प्रवचन सारांश	रु. ४५/-
• धर्मः आदर्श जीवननो आधार	रु. ४५/-
• महासतिपट्ठानसुत्त	रु. २०/-
• जागे अंतर्बोध	रु. ७५/-
• धारण करे तो धर्म	रु. ७०/-
• जागे पावन प्रेरणा	रु. १००/-
• क्या बुद्ध दुःखवादी थे?	रु. ३०/-
• विपश्यना शा माटे? (पुस्तिका)	रु. ०२/-
• मंगल जगे गृही जीवन में	रु. ३५/-
• निर्मल धारा धर्म की	रु. ६५/-
• बुद्धजीवन-चित्रावली	रु. ३३०/-
• लोक गुरु बुद्ध	रु. ०६/-
• भगवान बुद्ध की साम्प्रदायिकता-विहीन शिक्षा	रु. १०/-

अन्य भाषाओं में

• द आर्ट ऑफ लिविंग (तमिळ)	रु. ६०/-
• डिस्कोर्स समरीज (तमिळ)	रु. ३०/-
• ग्रेसियस फ्लो ऑफ धम्म (तमिळ)	रु. २५/-
• मंगल जगे गृही जीवन में (तेलगु)	रु. ३०/-
• प्रवचन सारांश (बंगाली)	रु. ३५/-
• धर्मः आदर्श जीवन का आधार (बंगाली)	रु. ३०/-
• महासतिपट्ठानसुत्त (बंगाली)	रु. ९०/-
• प्रवचन सारांश (मलयालम)	रु. ४५/-
• निर्मल धारा धर्म की (मलयालम)	रु. ४५/-
• जीने का हुनर (उर्दू)	रु. ७५/-
• धर्मः आदर्श जीवन का आधार (पंजाबी)	रु. ५०/-

पालि तिपिटक सेटः

अङ्गुत्तरनिकाय (अजिल्द) (१२ ग्रंथ)	रु. १५००/-
खुद्दकनिकाय – सेट १ (९ ग्रंथ)	रु. ५४००/-
दीघनिकाय अभिनवटीका (रोमन) (भाग १ और २)	रु. १०००/-

English Publications

- Sayagyi U Ba Khin Journal Rs. 225/-
- Essence of Tipitaka by U Ko Lay Rs. 130/-
- The Art of Living by Bill Hart Rs. 85/-
- The Discourse Summaries Rs. 60/-
- Healing the Healer by Dr. Paul Fleischman Rs. 35/-
- Come People of the World Rs. 40/-
- Gotama the Buddha: His Life and His Teaching Rs. 45/-
- The Gracious Flow of Dharma Rs. 40/-
- Discourses on Satipaṭṭhāna Sutta Rs. 80/-
- The Wheel of Dhamma Rotates Rs. 850/-
- Vipassana : Its Relevance to the Present World Rs. 110/-
- Dharma: Its True Nature Rs. 70/-
- Vipassana : Addictions & Health (Seminar 1989) Rs. 70/-
- The Importance of Vedanā and Sampajañña Rs. 135/-
- Pagoda Seminar, Oct. 1997 Rs. 80/
- Pagoda Souvenir, Oct. 1997 Rs. 50/-
- A Re-appraisal of Patanjali's Yoga- Sutra by S. N. Tandon Rs. 85/-
- The Manuals Of Dhamma by Ven. Ledi Sayadaw Rs. 205/-
- Was the Buddha a Pessimist? Rs. 65/-
- Psychological Effects of Vipassana on Tihar Jail Inmates Rs. 80/-
- Effect of Vipassana Meditation on Quality of Life (Tihar Jail) Rs. 60/-
- For the Benefit of Many Rs. 160/-
- Manual of Vipassana Meditation Rs. 80/-
- Realising Change Rs. 140/-
- The Clock of Vipassana Has Struck Rs. 130/-
- Meditation Now : Inner Peace through Inner Wisdom Rs. 85/-
- S. N. Goenka at the United Nations Rs. 20/-
- Defence Against External Invasion Rs. 10/-
- How to Defend the Republic? Rs. 6/-
- Why Was the Sakyan Republic Destroyed? Rs. 12/-
- Mahāsatipaṭṭhāna Sutta Rs. 65/-
- Pali Primer Rs. 95/-
- Key to Pali Primer Rs. 55/-
- Guidelines for the Practice of Vipassana Rs. 2/-
- Vipassana In Government Rs. 1/-
- The Caravan of Dhamma Rs. 90/-
- Peace Within Oneself Rs. 10/-
- The Global Pagoda Souvenir 29 Oct.2006 (English & Hindi) Rs. 60/-
- The Gem Set In Gold Rs. 75/-
- The Buddha's Non-Sectarian Teaching Rs. 15/-
- Acharya S. N. Goenka An Introduction Rs. 25/-
- Value Inculcation through Self-Observation Rs. 35/-
- Glimpses of the Buddha's Life Rs. 330/-
- Pilgrimage to the Sacred Land of Dhamma (Hard Bound) Rs. 750/-
- An Ancient Path Rs. 100/-
- Vipassana Meditation and the Scientific World View Rs. 15/-
- Path of Joy Rs. 200/-
- The Great Buddha's Noble Teachings The Origin & Spread of Vipassana (Small) Rs. 160/-
- Vipassana Meditation and Its Relevance to the World (Coffee Table Book) Rs. 800/-
- The Great Buddha's Noble Teachings The Origin & Spread of Vipassana (HB) Rs. 650/-
- Buddhaguṇagāthāvalī (in three scripts) Rs. 30/-
- Buddhasahassanāmāvalī (in seven scripts) Rs. 15/-
- English Pamphlets, Set of 9 Rs. 11/-
- Set of 10 Post Card Rs. 35/-
- Gotama the Buddha: His Life and His Teaching (French) Rs. 50/-
- Meditation Now: Inner Peace through Inner Wisdom (French) Rs. 80/-
- For the Benefit of Many (French) Rs. 195/-
- For the Benefit of Many (Spanish) Rs. 125/-
- The Art of Living (Spanish) Rs. 130/-
- Path of Joy (German, Italian, Spanish, French) Rs. 300/-

संपर्कः विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, जि. नाशिक, महाराष्ट्र. फोन: **०२५५३**-२४४०७६, २४४०८६, २४३७१२, २४३२३८. फैक्स: **०२५५३**-२४४१७६. (दक्षिण भारतीय भाषाओं में अनुवादित विपश्यना साहित्य, स्थानीय केंद्रों पर उपलब्ध है) Email: vri_admin@dhamma.net.in; **विपश्यना विशोधन विन्यास के प्रकाशन अब ऑनलाइन भी खरीदे जा सकते हैं। कृपया देखें www.vridhamma.org**

विपश्यना साधना केंद्र

विश्वभर में विपश्यना के निम्नलिखित केंद्र हैं। इन केंद्रों पर प्रायः हर माह दस दिवसीय आवासीय शिविर आयोजित होते हैं। इच्छुक व्यक्ति किसी भी केंद्र से भावी शिविर-कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त करके, अपनी सुविधानुसार सम्मिलित हो सकते हैं: –

प्रमुख केंद्र = धम्मगिरि, धम्मतपोवन : विपश्यना विश्व विद्यापीठ, इगतपुरी-४२२४०३, नाशिक. फोनः [९१] (**०२५५३**) २४४०७६, २४४०८६, २४३७१२, २४३२३८; फैक्सः ०२५५३-२४४१७६. Website: www.vri.dhamma.org, Email: <info@giri.dhamma.org> (केवल कार्यालय के समय अर्थात सुबह १० बजे से सायं ५ बजे तक).

धम्मनासिकाः संपर्कः १) **नाशिक विपश्यना केंद्र,** म.न.पा. जलशुद्धिकरण केंद्र के सामने, शिवाजीनगर, सातपुर, (पोस्ट-YCMOU), नाशिक-४२२२२२. संपर्कः फोनः (०२५३) ६५१६-२४२, ३२०३-६७७, मोबाइलः ९८२२५-१३२४४, Email: info@nasika.dhamma.org

धम्मसरिताः विपश्यना केंद्र, जीवन संध्या मंगल संस्थान, मातोश्री वृद्धाश्रम, सौरगांव, पोस्ट पडघा, ता. भिवंडी, जि. ठाणे-४२११०१ (खडावली मध्य रेल्वे स्टेशन के पास). फोनः (**०२५२२**) ६९५३०१, **संपर्कः** +९१ ७७९८३-२४६५९, ७७९८३-२५०८६.

धम्ममनमोदः मनमाड विपश्यना केंद्र, अनकाई किला स्टेशन के पास, पो. अनकाई, ता. येवला, जि. नाशिक-४२२ ४०३ **संपर्कः** (०२५९१) २२५१४१-२३१४१४.

धम्मवाहिनीः मुबई परिसर विपश्यना केंद्र, गांव रूंदे, टिटवाला (पूर्व) कल्याण, जि. ठाणे. **संपर्कः संपर्कः** मोबाईलः ९७७३०-६९९७८. केवल कार्यालय के दिन-- १२ से सायं ६ तक.

धम्मसाकेतः विपश्यना केंद्र, नालंदा स्कूल के पास, कानसई रोड, सुभाष टेकड़ी, उल्हासनगर-४२१००४, जि. ठाणे, महाराष्ट्र

धम्मविपुलः विपश्यना साधना केंद्र, सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट, प्लॉट नं. ९१ए; सेक्टर २६, पारासिक हिल, सीबीडी बेलापुर, नवी मुंबई ४०० ६१४. फोनः (०२२) २७५२-२२७७. Email: dhammavipula@gmail.com

धम्मपत्तनः एस्सेल वर्ल्ड के पास, गोराई खाड़ी, बोरीवली (पश्चिम) मुंबई – ४०० ०९१ व्यवस्थापक, फोनः (९१) (०२२) २८४५-२२३८, ३३७४-७५०१, मोबा. ९७७३०-६९९७५, (सुबह ११ से सायं ५ बजे तक); टेलि-फैक्सः (०२२) ३३७४-७५३१, Email: info@pattana.dhamma.org; Website: www.pattana.dhamma.org

धम्मसरोवरः खान्देश विपश्यना केंद्र, गेट नं. १६६, डेडरगांव जलशुद्धिकरण केंद्र के पास, मु.पो. तिखी-४२४ ००२, जिला- धुळे, (०२५६२) २०३४८२, ६९९५७३. मोबा. ९२२५४-६१०२१. **संपर्कः** फोनः २२२८६१, मोबा. ९९२२६-०७७१८, ९४०३४-२४३३३, ९४२२७-७७९०२. Email: info@sarovara.dhamma.org

धम्मानन्दः पुणे विपश्यना केंद्र, मरकल गांव के पास, आलंदी से ८ कि.मी. मोबा. कार्यालय ९२७१३-३५६६८. व्यवस्थापक मोबा. ९४२०४-८२८०५. **संपर्कः** पुणे विपश्यना समिति, नेहरू स्टेडियम के सामने, आनंद मंगल कार्यालय के पास, दादावाडी, पुणे-४११००२. फोनः (**०२०**) २४४६८९०३, २४४३६२५०; टेलि/फैक्सः २४४६४२४३. Email: info@ananda.dhamma.org Website:www.pune.dhamma.org;

धम्मपुण्णः संपर्कः पुणे विपश्यना समिति, दादावाडी, नेहरू स्टेडियम के सामने, आनंद मंगल कार्यालय के पास, पुणे-४११००२. फोनः (०२०) २४४३६२५०. २४४६८९०३. फैक्सः २४४६४२४३; Email: info@punna.dhamma.org

धम्मालयः दक्खिन विपश्यना अनुसंधान केंद्र, रामलिंग रोड, आलते पार्क, आलते, ता. हातकणंगले, जि. कोल्हापुर, पिनः ४१६१२३. फोनः **०२३०**-२४८७१६७, २४८७३८३, Email: info@alaya.dhamma.org. संपर्कः कार्यालयः २१०१/१९ इ, जयहिंद अपार्टमेंट, लक्ष्मीनगर, कोल्हापुर-४१६००५, फोनः(२३१) २५३०९९९, मोबा. ९७६७४-१३२३२.

धम्मअनाकुलः विपश्यना साधना केंद्र, खापरखेड़ फाटा, तेल्हारा-४४४१०८ जि. अकोला. **संपर्कः** १) विपश्यना चैरिटेबल ट्रस्ट, शेगांव, अपना बाजार, मेन रोड, शेगांव, जि. बुलडाना. फोनः ९५७९८-६७८९०, ९८८१२-०४१२५. २) श्री महेंद्र सिंह आनंद, मोबाइलः ९४२२१-८१९७०. Email: info@anakula.dhamma.org

धम्मअजयः विपश्यना साधना केंद्र, ग्राम - अजयपूर, पो. चिचपल्ली, मुल रोड, चंद्रपुर, Email: dhammaajaya@gmail.com **संपर्कः** १) श्री घरडे, सुगत नगर, नगीनाबाग वार्ड नं. २ जि. चंद्रपुर पिन- ४४२४०१. मोबाइलः ८००७१५१०५०, ९४२१७-२१००६, २) श्री प्रीतिकमल पाटील, मोबाइलः ९४२१७-२१००६, ९८२२५-७०४३५, ९३७०३१२६७३,

धम्ममल्लः संपर्कः श्री. शेलके, सिद्धार्थ सोसायटी, यवतमाळ, ४४५००१, फोनः ९४२२८-६५६६१.

धम्मभूसनः विपश्यना साधना समिति, शांतिनगर, ओमकार कॉलोनी, कोटेचा हायस्कूल के पास, जि. जलगांव, भुसावल ४२५२०१, Email: info@bhusana.dhamma.org, **संपर्कः** मोबा. ९८२२९-१४०५६.

धम्मअजन्ताः अजंता अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना समिति, एम. जी. एम. मेडिकल कालेज कैम्पस, एन-६, सिडको, औरंगाबाद-४३१००३. फोनः (०२४०) २३५००९२, २४८०१९४. Email: vipassana@emgm.org **संपर्कः** १) श्री रायबोले, फोनः (०२४०) २३४१८३६. २) श्री के. एन. पटेल, फोनः (निवास) (०२४०) २३५४२२३, (कार्या.) २३३३१३६. मोबाईलः ९४२२२-११३४४.

धम्मनागः नागपुर विपश्यना केंद्र – माहुरझरी गांव, नागपुर-कलमेश्वर रोड के पास, नागपुर; **संपर्कः** फोनः **०७१२**-२४५८६८६, २४२०२६१, मोबा. ९४२३४-०५६००; फैक्सः २५३९७१६. Email: info@naga.dhamma.org

धम्मसुगतिः संपर्कः १) श्री नारनवरे, एकायनो मग्गो धम्म प्रशिक्षण संस्था, सुगतनगर, नागपुर-१४. फोनः (०७१२) २६३०११५, फैक्सः २६५०८६७. मोबा. ९४२२१-२९२२९. २) सुरेंद्र राऊतः २६३२९१८. मोबा. ९२२६९-९६०८७.

धम्मवसुधाः विपश्यना केंद्र, हिवरा पोस्ट झडशी, ता. सेलु, जि. वर्धा **संपर्कः** १) श्री एवं सौ बांते, मोबा. ९३२६७३२५५०, ९३२६७३२५४७. २) श्री काटवे, मोबा. ९७३००६९७२६, Email: dhammavasudha@yahoo.com.in

धम्म छत्तपतिः फलटन, सातारा, महाराष्ट्र

धम्म आवासः लातुर विपश्यना समीती, आर. टी. ओ आफीस के पास, वसंत विहार कालोनी, बाभळगाव रोड, लातूर-४१३५३१ **संपर्कः** १) श्री द्वारकादास भुतडा, मोबा. ९६७३२५९९००, ०२३८२-२५९२८४, २) श्री आकाश कामदार, मोबा. ९९७०२-७७७०१.

धम्म निरंजनः विपश्यना साधना केंद्र, नेरली कुशता धाम नेरली. (नांदेड से ५ कि मी. की दुरी पर) **संपर्कः** १) श्री एस. एम. जोंधले, मोबाइलः ९४२२१८९३१८. २) डॉ. कुलकर्णी, फोनः (०२४६२) २५२६५९. मोबाइलः ९४२२१७३२०२.

धम्मथलीः विपश्यना केंद्र, पो.बॉ. २०८, जयपुर-३०२००१, राजस्थान, फोनः **[९१] ०१४१**-२६८०२२०, मोबा. ०-९६१०४-०१४०१, ०९६०२८-४८८९६. फैक्सः २५७६२८३. Email: info@thali.dhamma.org

धम्ममरुधराः विपश्यना साधना केंद्र, लहरिया रिसोर्ट के पीछे, पाल-चौपासनी लींक रोड, चोखा, जोधपुर-३४२००९. मोबा. +९१-९३१४७२७२१५, +९१-९८२८१३११२०, फैक्सः +९१-२९१-२७४६४३५. Email: info@marudhara.dhamma.org **संपर्कः** श्री नेमीचंद भंडारी, ४१, अशोक नगर, पाल लींक रोड, जोधपुर-३४२००३. मोबा.: +९१-९८२९०२७६२१,

धम्मपुब्बजः चूरू (राजस्थान) **पुब्बज भुमी विपश्यना ट्रस्ट,** बलेरी रोड, (चूरू से ६ कि.मी.) चूरू (राजस्थान): **संपर्कः** १) श्री श्रवण कुमार फुलवारी, सी-८६, सामुदायीक भवन के पास अग्रसेन नगर, चूरू, मोबा. ०९४१४६-७६०६१. Email: gk.churu@gmail.com २) श्री सुरेश खन्ना, ६५ इंदिरा कालोनी, वनी पार्क, जयपुर, मोबा. ९४१३१-५७-५६. Email: sureshkhanna56@yahoo.com

धम्मअजरामरः विपश्यना केंद्र, वीर तेजाजी नगर, दौराई, अजमेर-३०५००३; फोनः (०१४५) २४४३६०४. **संपर्कः** श्री कैलाश बैरवाल, मोबा. ९४१३२२८३४०, ९४६१५६१३४४, ९००११९६५५६. Email: kailashbairwal@yahoo.com

धम्मपुष्करः विपश्यना केन्द्र, ग्राम रेवत (केडेल), पुष्कर पर्वतसर रोड, पुष्कर, जि अजमेर. मोबा. +९१-९४१३३-०७५७०. फोनः +९१-१४५-२७८०५७०. **संपर्कः** १) श्री रवि तोषणीवाल, मोबा. ०९८२९०-७१७७८, Email: info@toshcon.com २) श्री अनिल धारीवाल, मोबा. ०९८२९०-२८२७५. फैक्सः ०१४५-२७८७१३१.

धम्मसोतः विपश्यना साधना संस्थान, राहका गांव, (निम्मोद पोलीस पोस्ट के पास) बल्लभगढ़-सोहना रोड, (सोहना से १२ कि.मी.), जिला- गुडगांव, सोहना, हरियाणा. मोबा. ९८१२६५५५९९, ९८१२६४१४००. (बल्लभगढ़ और सोहना से बस उपलब्ध है।) संपर्कः विपश्यना साधना संस्थान, रुम न. १०१५, १० वां तल, हेमकुंठ/मोदी टावर्स, ९८ नेहरू प्लेस, नई दिल्ली-११००१९. फोनः **(०११)** २६४८-५०७१, २६४८-५०७२, २६४५-२७७२. फैक्सः २६४७०६५८. Email: info@sota.dhamma.org

धम्मपट्ठान ः विपश्यना साधना केंद्र, कम्मासपुर, जि. सोनीपत, हरियाणा, पिन-१३१००१. मोबा. ०९९९१८७४५२४, **संपर्कः** ऊपर धम्मसोत के संपर्क पर.

धम्मकारुणिकः विपश्यना साधना संस्थान, गव्हरमेंट स्कूल के पास, गाँव नेवल, डाक सैनिक स्कूल कुंजपुरा, करनाल-१३२००१; **संपर्कः** श्री वर्मा, ५, शक्ति कालोनी, एस.बी.आई. के पास, करनाल-१३२००१. टेली-फैक्सः ०१८४-२२५७५४३, २२५७५४४; मोबा. ९९९२०-००६०१. Email: info@karunika.dhamma.org;

धम्म हितकारीः रोहतक, हरियाणा

धम्मसिखरः हिमाचल विपश्यना केंद्र, धर्मकोट, मैकलोडगंज, धर्मशाला, जिला- कांगरा, पिन-१७६२१९ (हि. प्र.) फोनः **०१८९२-** २२१३०९, २२१३६८. मोबा. (सायं ४ से ५) ०९८५७०-१४०५१. Email: info@sikhara.dhamma.org;

धम्मसलिलः देहरादून विपश्यना केंद्र, जनतनवाला गांव, देहरादून कॅन्ट तथा संतला देवी मंदिर के पास, देहरादून-२४८००१. फोनः **०१३५**-२१०४५५५, २७१५१८९. **संपर्कः** १) श्री भंडारी, १६ टैगोर विला, चक्राता रोड, देहरादून-२४८००१. फोनः (०१३५) २७१५१८९, फैक्सः २७१५५८०. २) श्री गुप्ता, फोनः २६५३३६६. Email: info@salila.dhamma.org;

धम्मसुवत्थीः जेतवन विपश्यना साधना केंद्रः कटरा बाईपास रोड, बुद्धा इंटर कालेज के सामने, श्रावस्ती, पिन-२७१८४५; फोनः **(०५२५२)** २६५४३९, ०९३३५८३३३७५ Email: info@suvatthi.dhamma.org **संपर्कः** श्री मुरली मनोहर, मातन हेलीया. मोबाईलः ०९४१५०-३६८९६, ०९४१५७-५१०५३.

धम्मलक्खणः लखनऊ विपश्यना केंद्र, अस्ती रोड, बक्शी का तालाब, लखनऊ-२२७२०२. फोनः (०५२२) २९६८५२५. मोबा. ०९७९४५४५३३४. Email: info@lakkhana.dhamma.org **संपर्कः** १) श्री जैन, ए-१०१, हेम्प्टन कोर्ट्स अपार्टमेंट्स, पिकैडिली होटल के पीछे, आलमबाग, लखनऊ-२२६ ००५, (उ.प्र.) फोनः नि. **(०५२२)**-२४२-४४०८, मोबा. ०९३३५९-०६३४१, ०९४१५०-३६८९६, ०९४१५७-५१०५३.

धम्मधजः पंजाब विपश्यना केंद्र, आनंदगढ़, पो. मेहलांवली-१४६११०, जिला- होशियारपुर. फोनः **०१८८२-**२७२३३३, मोबाइलः ९४६५१-४३४८८. Email: info@dhaja.dhamma.org

धम्म तिहारः नई दिल्ली जेल न. ४ तिहार, केन्द्रीय कारागृह, नई दिल्ली

धम्म रक्खकः नई दिल्ली नजफगढ़, पुलिस ट्रेनिंग कालेज

धम्मचक्कः विपश्यना साधना केंद्र, खरगीपुर गांव, पो. पियरी, चौबेपुर, (सारनाथ), वाराणसी. मोबाः ०९३०७०९३४८५, Email: info@cakka.dhamma.org **संपर्कः** १) श्री गुप्ता, फोनः ०५४२-३२४६०८९. मोबा. ९३३६९-१४८४३, (प्रातः १० से सायं ६.) २) श्री प्रेम श्रीवास्तव, मोबाईलः ९२३५४-४१९८३.

धम्मकल्याणः कानपुर (उ. प्र.) अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना साधना केंद्र, ढोड़ी घाट, हनुमान मंदिर के पास, गाँव एमा, पो. रूमा, कानपुर नगर- २०९४०२, (सेन्ट्रल रेलवे स्टेशन से २३ कि० मी० एवं रमादेवी चौराहा से १५ कि० मी० दूरी पर स्थित) फोनः ०७३८८-५४३७९३, ०७३८८-५४३७९५, मोबा. ०८९९५४८०१४९. Email: dhamma.kalyana@gmail.com, **संपर्कः** १) श्री अशोक साहू, मोबा. ०९८३९१-३८०८४, २) डा. ओ. पी गुप्ता, मोबा. ०९४५०१-३२४३६.

धम्मसिन्धुः कच्छ विपश्यना केंद्र, ग्राम- बाड़ा, मांडवी, जिला- कच्छ-३७०४७५. फोनः (कार्या.) (०२८३४) २७३३०३,

फैक्सः २२४४८८, २८८९११; **संपर्कः** फोनः **(०२८३४)** २२३०७६, २२३४०६, Email: info@sindhu.dhamma.org

धम्मकोट : सौराष्ट्र विपश्यना केंद्र, कोठारिया रोड, लोथडा गांव, राजकोट, गुजरात. फोनः ०२८१ –२७८२०४०, मोबाईलः ९३२७९-२३५४० (राजकोट से १५ कि.मी.) **संपर्कः** फोनः ०२८१- २२२०८६१६, मोबाईलः ९४२७२-२१५९१, फैक्सः २२२१३८४. Email: info@kota.dhamma.org

धम्मदिवाकरः उत्तर गुजरात विपश्यना केंद्र, मीट्ठा गाव, ता. और जिला- मेहसाणा, गुजरात; फोनः **(०२७६२)** २७२८००. Email: info@divakara.dhamma.org **संपर्कः** फोनः **(०२७६२)** २५४६३४, २५३३१५. मोबा. ०९४२९२३३०००,

धम्मसुरिन्दः सुरेंद्रनगर, गुजरात **संपर्कः**१) महासतीजी, फोनः (०२७५२) २४२०३०. २) डॉ. बविशी, फोनः २३२५६४.

धम्मभवनः संपर्कः १) 'धम्मभवन', ५ कालिंदी पार्क, अकोटा अतितिगृह के पीछे, अकोटा, बड़ोदा-३९००२०; फोनः (०२६५) २३४११८१. २) विट्ठलभाई पटेल, फोनः (०२६९२) मोबा. ९८२५०-२८०५७. Email: vvsou@hotmail.com

धम्म अम्बिका : विपश्यना ध्यान केंद्र, (१५ कि० मी० नवसारी तथा बिलीमोरा रेलवे स्टेशन) १) जी एल/१२ निलांजन काम्प्लेक्स, राधा किशन मंदिर के सामने, नूतन सोसायटी के पास, महर्षि अरविंद मार्ग दुधिया तलाव, नवसारी, २) श्री रत्नशीभाई के. पटेल, मोबा. ०९८२५०४४५३६, ३) श्री मोहनभाई पटेल, मोबा. ०९५३७२६६९०९.

धम्मपीठः गुर्जर विपश्यना केंद्र, ग्राम- रनोडा, ता. धोलका, जिला- अहमदाबाद- ३८७८१०, मोबा. ८९८००-०१११०, ८९८००-०१११२, ९४२६४-१९३९७. फोनः (०२७१४) २९४६९०. **संपर्कः** श्रीमती शशी तोडी, मोबा. ९८२४०-६५६६८. Email: info@pitha.dhamma.org

धम्मखेत्तः विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केंद्र, (१२.६ किमी.) माइल स्टोन नागार्जुन सागर रोड, कुसुम नगर, वनस्थलीपुरम हैदराबाद-५०००७०, (आंध्र प्रदेश) फोनः **(०४०)** २४२४०२९०, ३२४६०७६२, ०९४९१५९४२४७, फैक्सः २४२४१७४६. Email: info@khetta.dhamma.org

धम्मसेतुः विपश्यना साधना केंद्र, ५३३, पझान- थंडलम रोड, थीरुनीरमलाई रोड, द्वारा, थीरुमुदीवक्कम, चेन्नई-६०००४४. फोनः ०४४-२४७८०९५३, २४७८०९५२, मोबाइलः ९४४४०-२१६२२, **संपर्कः** फोनः ०४४-४३४०-७०००, ४३४०-७००१, फैक्सः ९१-४४-४२०१-११७७. मोबा. ०९८४०७-५५५५५. Email: setu.dhamma@gmail.com;

धम्मपफुल्लः बैंगलोर विपश्यना केंद्र, अलूर-५६२१२३. (गाँव अलूर, अलूर पंचायत कार्यालय के पास) तुमकूर हाईवे के सामने दासनपुरा बैंगलोर उत्तर तालुका, (कर्नाटक). फोनः **(०८०)** २३७१-२३७७, २३७१७१०६, ९१-९७३९५९१५८० (सुबह १० से सायं ६ तक), ९२४२३-५७४२४ (सुबह ९ से दोपहर २ तथा सायं ४ से ६ तक), एवं ९३४३५-४५३८८ (सुबह ११ से दोपहर ३ तक) Email: info@paphulla.dhamma.org [बैंगलोर रेल्वे स्टेशन से २३ की.मी. दूर; मजेस्टिक बस स्टैंड के प्लेटफार्म २० से नं. २५६, २५८, २५८सी, २५८ के बस से तुमकूर हाईवे पर हिमालया ड्रग भवन तक, तथा वहां से अलूर गांव के लिए ऑटोरिक्शा मिलते हैं।]

धम्मनागाज्जुन : विपश्यना साधना केंद्र, हिल कॉलोनी, नागार्जुन सागर, जि. नालगोंडा, आंध्र प्रदेश, (हैदराबाद से १४०.४ किमी, बुद्धपार्क के पास, हिल कॉलोनी से हैदराबाद की तरफ ३ किमी, दूरी पर) पिन-५०८२०२. फोनः (८६८०) २७७९९९ मोबाः ०९९६३७७५६४५, ९४४०१- ३९३२९. Email: info@nagajjuna.dhamma.org

धम्मनिज्झान : विपश्यना साधना केंद्र, इंदूर, पो. पोचाराम-५०३१८६, येदपल्ली मंडल, जि. निजामाबाद, फोनः **(०८४६७)** ३१६६६३, ९९०८५९६३३६. Email: info@nijjhana.dhamma.org

धम्मविजय : विपश्यना साधना केंद्र, विजयराय, पोस्ट- पेदावेगी मंडलम्, पिन-५३४४७५, जि. पश्चिम गोदावरी, (आंध्र प्रदेश). [विजयराय गांव एलूरु से १५ किमी, एलूरु चिंतलपुडी रोड पर. विजयराय बस स्टॅन्ड से ३ की. मी. दूरी पर धम्मविजया सेंटर हैं, बस स्टॅन्ड से ॲटो/टॅक्सी उपलब्ध हैं।] फोनः **(०८८१२)** २२५५२२; मोबा. ९४४१४-४९०४४

धम्मारामः विपश्यना अंतर्राष्ट्रीय साधना केंद्र, कुमुदावल्ली गांव, भीमावरम-भानुकू रोड, (भीमावराम के पास), मंडल -पाल कोडेरु, जि. पश्चिम गोदावरी, पिन-५३४२१०. फोनः ०८८१६- २३६५६६. Email: info@rama.dhamma.org

धम्म कोण्डञ्ञ : विपश्यना साधना केंद्र, कोंडापुर (व्हाया) संगारेड्डी, जि. मेडक - ५०२३०६. **संपर्कः** मोबा. ९३९२०-९३७९९, ९३९८३-१६१५५.

धम्मकेतनः विपश्यना साधना केंद्र, पो. मम्परा (व्हाया) कोडुकुलान्जी, चेन्गन्नूर, जि. अलपुज्झा. केरल-६८९५०८. फोनः (०४७९) २३५-१६१६. Email: info@ketana.dhamma.org **संपर्कः** १) (कार्यालय) **केरल विपश्यना समिती,** मायथ्री, नेरेचथरा लाइन, पॅरनडोर रोड, एलमकरा पो. ऑ. कोची-६८२ ०२६. केरल फोनः (०४८४) २५३९८९१ २) श्री बी. रविंद्रन, मोबा. ९८४६५-६९८९१.

धम्म मधुराः मदुराई (धर्म की मधुरता) मदुराई

धम्मकानन : धम्मकानन विपश्यना केंद्र, वैनगंगा तट, रेंगाटोला, पो. गर्रा, बालाघाट. फोनः (०७६३२) २९२४६५; **संपर्कः** १) श्री हरीदास मेश्राम, १२६, रतन कुटी, गंगानगर रोड, बुढ़ी, बालाघाट-४८१००१, (म. प्र.) फोनः **(०७६३२)** २३९१६५, मोबाईलः ०९४२५१४००१५, Email: dineshbgt@hotmail.com २) श्री खोब्रागडे, मोबा. ०९४२४३-३६२४१.

धम्मकेतु : विपश्यना केंद्र, पोस्ट बॉक्स १६, थनौद, व्हाया-अंजौरा, जिला-दुर्ग, छत्तीसगढ़-४९१००१; (म.प्र.) फोनः (०७८८) ३२०५५१३, मोबा. ९५८९८४२७३७. Email: info@ketu.dhamma.org **संपर्कः** १) धम्मकेतु, (उपरोक्त केंद्र के पते पर) तथा मोबा. ०९४२५२-३४७५७, ०९०९८९-२०२४६.

धम्मबल : विपश्यना साधना केंद्र, भेडाघाट थाने से एक किलोमीटर, बापट मार्ग, भेडाघाट, जबलपुर. मोबा. ९३००५०६२५३. **संपर्कः** विपश्यना ट्रस्ट, जबलपुर, द्वारा - मधु मेडिकल स्टोर्स, मेडिसिन काम्प्लेक्स, शास्त्रीब्रिज के पास, मॉडेल रोड, बैंक ऑफ बड़ौदा के बाजू में, जबलपुर-०२ फोनः ०७६१-४००६२५२, मोबा. ९९८१५-९८३५२, ९४२४३-५५२१४.

धम्मलिच्छवी : वैशाली विपश्यना केंद्र, लदौरा ग्राम, लदौरा पाक्री, मुजफ्फरपुर-८४३११३. फोनः ०९९३११६१२९०.

संपर्कः श्री गोयन्का, जेनीथ आटो सर्विस, अघोरिया बाजार, पो. रामना, मुजफ्फरपुर, पिन-८४२००२. फोनः **०६२१-**२२४०-२१५, २२४७७६०. Email: info@licchavi.dhamma.org

धम्मबोधिः बोधगया अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना साधना केंद्र, मगध विश्वविद्यालय के समीप, पो. मगध विश्वविद्यालय, गया-ढोबी रोड, बोधगया-८२४२३४, मोबा. ९४७१६-०३५३१, Email: info@bodhi.dhamma.org **संपर्कः** फोनः **(०६३१)** २२००४३७, ९९५५९-११५५६.

धम्मपुब्बोत्तरः मिजोरम विपश्यना साधना केंद, कमलानगर-२, सीएडीसी, चांगतै-सी, जि. लोंगतलाई, मिजोरम -७९६७७२. Email: mvmc.knagar@gmail.com, **संपर्कः** दिगंबर चकमा, फोनः ०३७२-२५६३६८३. मोबा. ०९४३६७-६३७०८,

धम्मपुरीः त्रिपुरा विपश्यना मेडिटेशन सेंटर, पो. मचमरा, जि. उत्तर त्रिपुरा, पिनः ७९९२६५. मोबा. ०९८६२६-४६७६४, Email: Info@Puri.dhamma.org **संपर्कः** श्री देवान मोहन, फोनः ०३८१-२३००४४१, मोबा. ०९८६२१-५४८८२, ०९४०२५-२७१९१.

धम्मगंगाः विपश्यना केंद्र, सोदपुर, हरिश्चन्द्र दत्ता रोड, पनिहटी, बारो मन्दिर घाट, कोलकाता-७००११४. फोनः **(०३३)** २५५३२८५५. Email: info@ganga.dhamma.org **संपर्कः** कार्यालयः श्री काजड़िया, २२, बोनफील्ड लेन, दूसरा तल्ला, कोलकाता-७००००१, फोनः **(०३३)** २२४२३२२५/४५६१ (२) श्री तोदी, १२३A, मोतीलाल नेहरू रोड, कोलकाता-२९ फोन नि. २४८५४१७९. मोबा. ९८३१४-४७७०१.

धम्मबंगः कोलकाता, पश्चिम बंगाल **संपर्कः** धम्मगंगा केंद्र.

धम्मपालः धम्मपाल विपश्यना केंद्र, केरवा डैम के पीछे, ग्राम दौलतपुरा, भोपाल-४६२ ०४४, Email: dhammapal@airtelmail.in; **संपर्कः** मोबा. ९८९३२-८९०४९, फोनः (०७५५) २४६८०५३, २४६२३५१, फैक्सः २४६-८१९७. ऑन लाइन आवेदन; http://www.dhamma.org/en/schedules/schpala.shtml

धम्ममालवा : इंदौर (म.प्र.) विपश्यना केंद्र, ग्राम - जंबूडी हप्सी, गोमटगिरी के आगे, पितृ पर्वत के सामने, हातोद रोड, इंदौर-४५२००३. **संपर्कः** १) इंदौर विपश्यना इंटरनेशनल फाउंडेशन, ट्रस्ट, "लाभगंगा" ५८२, एम. जी. रोड इंदौर (म.प्र.) फोनः (०७३१) ४२७३३१३. Email: info@malava.dhamma.org; dhammamalava@gmail.com २) श्री शंभुदयाल शर्मा, मोबा. ९८९३१-२९८८८.

धम्मरत : (रतलाम से १५ कि.मी.) साई मंदीर के पीछे, ग्राम धमनोद ता. साईलन जि. रतलाम-४५७००१, फैक्सः ०७४१२ ४०३८८२, मोबा. ०९८२७५-३५२५७. Email: dhamm.rata@gmail.com **संपर्कः** रतलाम विपश्यना समिति, द्वारा डा वाधवानी क्लीनीक, ११७, स्टेशन रोड, रतलाम-४५७००१ मोबा. ०९९८१०-८४८२२, ९४२५३-६४९५६.

धम्मउपवनः बाराचकिया, बिहार **संपर्कः** फोनः निवास (०६२१) २४४ ९७५; ५५२१ ०७७०

धम्मउत्कलः विपश्यना साधना केंद्र, ग्राम चानबेरा पो. अमसेना, (व्हाया) खरियार रोड जिलाः नुआपाडा, उड़ीसा-७६६१०६, मोबा. ०९४०६२३७८९६, संपर्कः १) श्री. एस. एन. अग्रवाल, मोबा. ०९४३८६१०००७, २) श्री. पुरुषोत्तम जे. मोबा. ०९४३७०-७०५०५,

धम्मसिक्किमः विपश्यना साधना केंद्र, पो. ऑ. आहो सेन्ती, ग्राम, सेन्ती ईस्ट सिक्किम- ७३७१३५, **संपर्कः** शीलादेवी चौरसिया, मोबा. ०९८३०७-०६४८१, ०९७४८४-६१७८७, ०९४३४३-३९३०३, ०९४३४८-६२२२६. Email: basantigorsia@hotmail.com

धर्मशृंगः नेपाल विपश्यना केंद्र, मुहान पोखरी, बूढ़ानीलकंठ, पो. बा. १२८९६, काठमांडू, फोनः **९७७ (०१)** ४३७१६५५, ४३७१००७, ४२५०५८१, ४२२५४९०; निवासः ४२२४७२०, ४२२६३१४. Email: info@sringa.dhamma.org; **संपर्कः** फोनः २५०५८१, २२५४९०, नि.२२१२९०. फैक्सः २२४७२०, २२६३१४.

धम्मजननीः लुंबिनी विपश्यना केंद्र, लुंबिनी (पीस फ्लेम के पास), रुपनदेही, लुंबिनी अंचल, नेपाल. Email: info@janani.dhamma.org फोनः ९७७ (७१) ५८०२८२. **संपर्कः** नेपाल. फोनः **९७७ (७१)** ५४१५४९.

धम्मविराट : पूर्वांचल विपश्यना केंद्र, फुलबरी टोल, बस पार्क के दक्षिण की ओर इथारी- ७ संसरी, नेपाल; फोनः [९७७] (२५) ५८५५२१; Email: info@birata.dhamma.org; **संपर्कः** १) श्री मुंदडा, फोनः [९७७] (२१) ५२५४८६, ५२७६७१. फैक्सः ५२६४६६; २) श्री गोयल, फोनः दूकान [९७७](२५)५२३५२८, नि. ५२६८२९.

धम्मतराई : बीरगंज विपश्यना केंद्र, परवानीपुर, पारसा, नेपाल. Email: info@tarai.dhamma.org **संपर्कः** १) कार्यालयः संदीप बिल्डींग, आदर्श नगर, पो. बा. नं. ३२. फोनः ०५१-५२१८८४. फैक्सः ०५१-५८०४६५. मोबा. ९८०४२-४५७६

धम्मचितवन : चितवन विपश्यना केंद्र, मंगलपुर व्ही.डी.सी. वार्ड नं ८, विजयनगर बाजार के समीप, चितवन, नेपाल Email: info@citavana.dhamma.org **संपर्कः** १) श्री महाराजन, फोनः ९७७(५६) ५२०२९४, ५२८२९४

धम्मकीत्ति : कीर्तिपुर विपश्यना केंद्र, देवधोका, कीर्तिपुर, नेपाल. **संपर्कः** श्री महर्जन, समाल तोले, वार्ड नं. ६, कीर्तिपुर.

धम्मपोखरा : पोखर विपश्यना केंद्र, पचभैया लेखनाथ नगरपालिका, पोखरा, कसकी, नेपाल. **संपर्कः** श्री नारा गुरुंग फोनः [९७७] (०६१) ६९१९७२, मोबा. ९८४६२-३२३८३, ९८४१२-५५६८८. Email: info@pokhara.dhamma.org

Cambodia

Dhamma Laṭṭhikā, Battambang Vipassana Centre, Trungmorn Mountain, National Route 10, District Phnom Sampeau, Battambang, Cambodia **Contact:** Phnom-Penh office: Mrs. Nary POC, Street 350, #35, Beng Keng Kang III, Khan Chamkar Morn, Phnom-Penh, Cambodia. P.O. Box 1014 Phnom-Penh, Cambodia Tel. [855] (012) 689 732; poc_nary@hotmail.com; **Local Contact:** Off: Tel: [855] (536) 488 588, 2. Mr. Sochet Kuoch, Tel: [855] (092) 931 647, [855] (012) 995 269 Email: mientan2000@yahoo.co.uk and ms_apsara@yahoo.com

Hong Kong

Dhamma Muttā, G.P.O. Box 5185, Hong Kong Tel: 852-2671 7031; Fax: 852-8147 3312 Email: info@hk.dhamma.org

Indonesia

Dhamma Jāvā, Jl. H. Achmad No.99; Kampung Bojong, Gunung Geulis, Kecamatan Sukaraja, Cisarua-Bogor, Indonesia. Tel: [62] (0251) 827-1008; Fax: [62] (021) 581-6663; Website: www.java.dhamma.org **Course Registration Office Address:** IVMF (Indonesia Vipassana Meditation Foundation), Jl. Tanjung Duren Barat I, No. 27 A, Lt. 4, Jakarta Barat, Indonesia Tel : [62] (021) 7066 3290 (7am to 10pm); Fax: [62] (021) 4585 7618 Email: info@java.dhamma.org

Iran

Dhamma Īran, Teheran Dhamma House Tehran Mehrshahr, Eram Bolvar, 219 Road, No. 158 Tel: 98-261-34026 97; website: www.iran.dhamma.org Email: info@iran.dhamma.org

Israel

Dhamma Pamoda, Kibbutz Deganya-B, Jordan Valley, Israel **City Contact:** Israel Vipassana Trust, P.O. Box 75, Ramat-Gan 52100, Israel Website: www.il.dhamma.org/os/Vipassana-centre-eng.asp Email: info@il.dhamma.org

Dhamma Korea, Choongbook, Korea. Dabo Temple, 17-1, samsong-ri, cheongcheon-myun, gwaesan-koon, choongbook, Korea. Tel: +82-010-8912-3566, +82-010-3044-8396 Website: www.kr.dhamma.org Email: dhammakor@gmail.com

Japan,

Dhamma Bhānu, Japan Vipassana Meditation Centre, Iwakamiyoku, Hatta, Mizucho-cho, Funai-gun, Kyoto 622 0324 Tel/Fax: [81] (0771) 86 0765, Email: info@bhanu.dhamma.org

Dhammādicca, 782-1 Kaminogo, Mutsuzawa-machi, Chosei-gun, Chiba, Japan 299 4413. Tel: [81] (475) 403 611. Website: www.adicca.dhamma.org

Malaysia

Dhamma Malaya, Malaysia Vipassana Centre, Centre Address: Gambang Plantation, opp. Univ. M.P. Lebuhraya MEC, Gambang, Pahang, Malaysia **Office Address:** No., 30B, Jalan SM12, Taman Sri Manja, 46000 Petaling Jaya, Malaysia. Tel: [60] (16) 341 4776 (English Enquiry) Tel: [60] (12) 339 0089 (Mandarin Enquiry) Fax: [60] (3) 7785 1218; Website: www.malaya.dhamma.org Email: info@malaya.dhamma.org

Mongolia

Dhamma Mahāna, Vipassana center trust of Mongolia. Eronkhy said Amaryn Gudamj, Soyolyn Tov Orgoo, 9th floor, Suite 909, Mongolia Tel: [976] 9191 5892, 9909 9374; **Contact:** Central Post Office, P. O. Box 2146 Ulaanbaatar 211213, Mongolia Email: info@mahana.dhamma.org

Myanmar

Dhamma Joti, Vipassana Centre, Wingaba Yele Kyaung, Nga Htat Gyi Pagoda Road, Bahan, Yangon, Myanmar Tel: [95] (1) 549 290, 546660; Office: No. 77, Shwe Bon Tha Street, Yangon, Myanmar. Fax: [95] (1) 248 174 **Contact:** Mr. Banwari Goenka, Goenka Geha, 77 Shwe Bon Tha Street, Yangon, Myanmar Tel: [95] (1) 241 708, 253 601, 245 327, 245 201; Res. [95] (1) 556 920, 555 078, 554 459; Tel/Fax: Res. [95] (01) 556 920; Off. 248 174; Mobile: 95950-13929; Email: bandoola@mptmail.net.mm; goenka@ mptmail.net.mm Email: dhammajoti@mptmail.net.mm

Dhamma Ratana, Oak Pho Monastery, Myoma Quarter, Mogok, Myanmar **Contact:** Dr. Myo Aung, Shansu Quarter, Mogok. Mobile: [95] (09) 6970 840, 9031 861;

Dhamma Maṇḍapa, Bhamo Monastery, Bawdigone, Near Mandalay Arts &

Science University, 39th Street, Mahar Aung Mye Tsp., Mandalay, Myanmar Tel: [95] (02) 39694 Email: info@mandala.dhamma.org
Dhamma Maṇḍala, Yetagun Taung, Mandalay, Myanmar, Tel: [95] (02) 57655 **Contact:** Dr Mya Maung, House No 33, 25th Street, (Between 81 and 82nd Street), Mandalay, Myanmar Tel: [95] (02) 57655, Email: info@mandala.dhamma.org
Dhamma Makuṭa, Mindadar Quarter, Mogok.Mandalay Division, Myanmar. Tel: [95] (09) 80-31861. Email: info@joti.dhamma.org
Dhamma Manorama, Main road to Maubin University, Maubin, Myanmar. Tel: **Contact:** U Hla Myint Tin, Headmaster, State High School, Maubin, Myanmar. Tel: [95] (045) 30470
Dhamma Mahimā, Yechan Oo Village, Mandalay-Lashio Road, Pyin Oo Lwin, Mandalay Division, Myanmar. Tel: [95] (085) 21501. Email: info@mandala.dhamma.org
Dhamma Manohara, Aung Tha Ya Qr, Thanbyu-Za Yet, Mon State **Contact:** Daw Khin Kyu Kyu Khine, No.64 Aungsan Road, Set-Thit Qr, Thanbyu-Zayet, Mon State, Myanmar. Tel: [95] (057) 25607
Dhamma Nidhi, Plot No. N71-72, Off Yangon-Pyay Road, Pyinma Ngu Sakyet Kwin, In Dagaw Village, Bago District, Myanmar. **Contact:** Moe Mya Mya (Micky), 262-264, Pyay Road, Dagon Centre, Block A, 3rd Floor, Sanchaung Township, Yangon11111, Myanmar. Tel: 95-1-503873, 503516~9, Email: dagon@mptmail.net.mm
Dhamma Ñāṇadhaja, Shwe Taung Oo Hill, Yin Ma Bin Township, Monywa District, Sagaing Division, Myanmar **Contact:** Dhamma Joti Vipassana Centre
Dhamma Lābha, Lasho, Myanmar
Dhamma Magga, Near Yangon, Off Yangon Pegu Highway, Myanmar
Dhamma Mahāpabbata, Taunggyi, Shan State, Myanmar
Dhamma Cetiya Paṭṭhāra, Kaytho, Myanmar
Dhamma Myuradipa, Irrawadi Division, Myanmar
Dhamma Pabbata, Muse, Myanmar
Dhamma Hita Sukha Geha, Insein Central Jail, Yangon, Myanmar
Dhamma Hita Sukha Geha-2, Central Jail Tharawaddy, Myanmar
Dhamma Rakkhita, Thayawaddi Prison, Bago, Myanmar
Dhamma Vimutti, Mandalay, Myanmar

Philippines

Dhamma Phala, Philippines Email: info@ph.dhamma.org

Sri Lanka

Dhamma Kūṭa, Vipassana Meditation Centre, Mowbray, Hindagala, Peradeniya, Sri Lanka Tel/Fax: [94] (081) 238 5774; Tel: [94] (060) 280 0057; Website: www.lanka.com/dhamma/dhammakuta Email: dhamma@sltnet.lk
Dhamma Sobhā, Vipassana Meditation Centre Balika Vidyala Road, Pahala Kosgama, Kosgama, Sri Lanka Tel: [94] (36) 225-3955 Email: dhammasobhavmc@gmail.com
Dhamma Anurādha, Ichchankulama Wewa Road, Kalattewa, Kurundankulama, Anuradhapura, Sri Lanka. Tel: [94] (25) 222-6959; **Contact:** Mr. D.H. Henry, Opposite School, Wannithammannawa, Anuradhapura, Sri Lanka. Tel: [94] (25) 222-1887; Mobile. [94] (71) 418-2094. Website: www.anuradha.dhamma.org Email: info@anuradha.dhamma.org

Taiwan

Dhammodaya, No. 35, Lane 280, C hung-Ho Street, Section 2, Ta-Nan, Hsin She, Taichung 426, P. O Box No. 21, Taiwan Tel: [886] (4) 581 4265, 582 3932; Website: www.udaya.dhamma.org Email: dhammodaya@gmail.com
Dhamma Vikāsa, Taiwan Vipassana Centre - Dhamma Vikasa No. 1-1, Lane 100, Dingnong Road Laonong Village Liouguei Township Kaohsiung County

Taiwan Republic of China Tel: [886] 7-688 1878 Fax: [886] 7-688 1879 Email: info@vikasa.dhamma.org

Thailand,

Dhamma Kamala, Thailand Vipassana Centre, 200 Yoo Pha Suk Road, Ban Nuen Pha Suk, Tambon Dong Khi Lek, Muang District, Prachinburi Province, 25000, Thailand Tel. [66] (037) 403- 514-6, [66] (037) 403 185; Website: http://www.kamala.dhamma.org/ Email: info@kamala.dhamma.org

Dhamma Ābhā, 138 Ban Huay Plu, Tambon Kaengsobha, Wangton District, Pitsanulok Province, 65220, Thailand Tel : [66] (81) 605-5576, [66] (86) 928-6077; Fax : [66] (55) 268 049; Website: http://www.abha.dhamma.org/ Email: info@abha.dhamma.org

Dhamma Suvaṇṇa, 112 Moo 1, Tambon Kong, Nongrua District, Khonkaen Province, 40240, Thailand Tel [66] (08) 9186-4499, [66] (08) 6233-4256; Fax [66] (043) 242-288; Website: http://www.suvanna.dhamma.org/ Email: info@suvanna.dhamma.org

Dhamma Kañcana, Mooban Wang Kayai, Tambon Prangpley, Sangklaburi District, Kanchanaburi Province, Thailand Tel. [66] (08) 5046-3111 Fax [66](02) 993-2700 Email: info@kancana.dhamma.org

Dhamma Dhānī, 42/660 KC Garden Home Housing Estate, Nimit Mai Road, East Samwa Sub-district, Klongsamwa District, Bangkok 10510, Thailand Tel. [66] (02) 993-2711 Fax [66] (02) 993-2700 Email: info@dhani.dhamma.org

Dhamma Sīmanta, Chiengmai, Thailand **Contact:** Mr. Vitcha Klinpratoom, 67/86, Paholyotin 69, Anusaowaree, Bangkhen, BKK 10220 Thailand Tel: [66] (81) 645 7896; Fax: [66] (2) 279 2968; Email: vitchcha@yahoo.com Email: info@simanta.dhamma.org

Dhamma Porāṇo: A meditator has donated six acres of land near Nakorn Sri Dhammaraj (the name of the city), an important and ancient sea-port.

Dhamma Puneti, Udon Province, Thailand

Dhamma Canda Pabhā, Chantaburi, an eastern town about 245 kilometres from Bangkok

Australia & New Zealand,

Dhamma Bhūmi, Vipassana Centre, P. O. Box 103, Blackheath, NSW 2785, Australia Tel: [61] (02) 4787 7436; Fax: [61] (02) 4787 7221 Website: www.bhumi.dhamma.org Email: info@bhumi.dhamma.org

Dhamma Rasmi, Vipassana Centre Queensland, P. O. Box 119, Rules Road, Pomona, Qld 4568, Australia Tel: [61] (07) 5485 2452; Fax: [61] (07) 5485 2907 Website: www.rasmi.dhamma.org Email: info@rasmi.dhamma.org

Dhamma Pabhā, Vipassana Centre Tasmania, GPO Box 6, Hobart, Tasmania 7001, Australia Tel: [61] (03) 6263 6785; Website: www.pabha.dhamma.org Course registration & information: [61] (03) 6228-6535 or (03) 6266-4343 Email: info@pabha.dhamma.org

Dhamma Āloka, P. O. Box 11, Woori Yallock, VIC 3139, Australia Tel: [61] (03) 5961 5722; Fax: [61] (03) 5961 5765 Website: www.aloka.dhamma.org Email: info@aloka.dhamma.org

Dhamma Ujjala, Mail to: PO Box 10292, BC Gouger Street, Adelaide SA 5000, [Lot 52, Emu Flat Road, Clare SA 5453, Australia] **Tel Contact:** Anne Blizzard [61] (0)8 8278 8278; Email: info@ujjala.dhamma.org

Dhamma Padīpa, Vipassana Foundation of WA, Australia, Website: www.dhamma.org.au **Contact:** Andrew Parry C/- 13 Goldsmith Road, Claremont, WA 6010, Australia. Tel: [61]-(8)-9388 9151. Email: andparry@optusnet.com.au Email: info@padipa.dhamma.org

Dhamma Medinī, 153 Burnside Road, RD3 Kaukapakapa, Rodney District, New Zealand Tel: [64] (09) 420 5319; Fax: [64] (09) 420 5320; Website: www.medini.dhamma.org Email: info@medini.dhamma.org

Dhamma Passaddhi, Northern Rivers region, New South Wales Email: info@passaddhi.dhamma.org

Europe,

Dhamma Dīpa, Harewood End, Herefordshire, HR2 8JS, UK Tel: [44] (01989) 730 234; male AT bungalow: [44] (01989) 730 204; female AT bungalow: [44] (01989) 731 024; Fax: [44] (01989) 730 450; Website: www.dipa.dhamma.org Email: info@dipa.dhamma.org

Dhamma Padhāna, European Long-Course Centre, Harewood End, Herefordshire, HR2 8JS, UK Website: www.eu.region.dhamma.org/os username <oldstudent> password <behappy> Email: info@padhana.dhamma.org

Dhamma Dvāra, Vipassana Zentrum, Alte Strasse 6, 08606 Triebel, Germany Tel: [49] (37434) 79770; Website: www.dvara.dhamma.org Email: info@dvara.dhamma.org

Dhamma Mahī, France Vipassana Centre, Le Bois Planté, Louesme, F-89350 Champignelles, France. Tel: [33] (0386) 457 514; Fax [33] (0386) 457 620; Website: www.mahi.dhamma.org Email: info@mahi.dhamma.org

Dhamma Nilaya,, 6, Chemin de la Moinerie, 77120, Saints, France Tel/Fax: [33] 1 6475 1370; Mobile: 0609899079 Email: vcjuly2001@orange.fr

Dhamma Aṭala, Vipassana Centre, SP29, Lutirano 15 50034 Lutirano (Fi) Italy Tel: Off. [39] (055) 804 818; Website: www.atala.dhamma.org Email: info@atala.dhamma.org

Dhamma Sumeru, Centre Vipassana, No. 140, Ch-2610 Mont-Soleil, Switzerland Tel: [41] (32) 941 1670; Website: www.sumeru.dhamma.org Email: info@sumeru.dhamma.org Registration office: registration@sumeru.dhamma.org

Dhamma Neru, Centro de Meditación Vipassana, Cami Cam Ram, Els Bruguers, A.C.29, Santa Maria de Palautordera, 08460 Barcelona, Spain Tel: [34] (93) 848 2695; Website: www.neru.dhamma.org Email: info@neru.dhamma.org

Dhamma Pajjota, Dhamma Pajjota, Belgium, Light (or Torch) of Dhamma, Vipassana Centrum, Driepaal 3, 3650 Dilsen-Stokkem, Belgium. Tel: [32] (0) 89 518 230; Website: www.pajjota.dhamma.org Email: info@pajjota.dhamma.org

Dhamma Sobhana, Lyckebygården, S-599 93 Ödeshög, Sweden. Tel: [46] (143) 211 36; Website: www.sobhana.dhamma.org Email: info@sobhana.dhamma.org

Dhamma Pallava, Vipassana Poland **Contact:** Malgorzata Myc 02-798 Warszawa, Ekologiczna 8 m.79 Poland Tel: [48](22) 408 22 48 Mobile: [48] 505-830-915 Email: info@pl.dhamma.org

Dhamma Sukhakari, East Anglia (UK)

North America

Dhamma Dharā, VMC, 386 Colrain-Shelburne Road, Shelburne MA 01370-9672, USA Tel: [1] (413) 625 2160; Fax: [1] (413) 625 2170; Website: www.dhara.dhamma.org Email: info@dhara.dhamma.org

Dhamma Kuñja, Northwest Vipassana Center, 445 Gore Road, Onalaska, WA 98570, USA Tel/Fax: [1] (360) 978 5434, Reg Fax: [1] (360) 242-5988; Website: www.kunja.dhamma.org Email: info@kunja.dhamma.org

Dhamma Mahāvana, California Vipassana Center 58503 Road 225, North Fork, California, 93643 Mailing address: P. O. Box 1167, North Fork, CA 93643, USA Tel: [1] (559) 877 4386; Fax [1] (559) 877 4387; Website: www.mahavana.dhamma.org Email: info@mahavana.dhamma.org

Dhamma Sirī, Southwest Vipassana Center, 10850 County Road 155 A Kaufman, TX 75142, USA Mailing address: P. O. Box 7659, Dallas, TX 75209, USA Tel: [1] (972) 962-8858; Fax: [1] (972) 346-8020 (registration); [1] (972) 932-7868 (center); Website: www.siri.dhamma.org Email: info@siri.dhamma.org

Dhamma Surabhi, Vipassana Meditation Center, P. O. Box 699, Merritt, BC V1K 1B8, Canada Tel: [1] (250) 378 4506; Website: www.surabhi.dhamma.org Email: info@surabhi.dhamma.org

Dhamma Maṇḍa, Northern California Vipassana Center, Mailing address: P. O. Box 265, Cobb, Ca 95426, USA Physical address: 10343 Highway 175, Kelseyville, CA 95451, USA Tel: [1] (707) 928-9981; Website: www.manda.dhamma.org Email: info@manda.dhamma.org

Dhamma Suttama, Vipassana Meditation Centre 810, Côte Azélie, Notre-Dame-de-Bonsecours, Montebello, (Québec), J0V 1L0, Canada Tél. 1-819-423-1411, Fax. 1- 819- 423- 1312 Website: www.suttama.dhamma.org Email: info@suttama.dhamma.org

Dhamma Pakāsa, Illinois Vipassana Meditation Center, 10076 Fish Hatchery Road, Pecatonica, IL 61063, USA Tel: [1] (815) 489-0420; Fax [1] (360) 283-7068 Website: www.pakasa.dhamma.org Email: info@pakasa.dhamma.org

Dhamma Toraṇa, Ontario Vipassana Centre, 6486 Simcoe County Road 56, Egbert, Ontario, L0L 1N0 Canada Tel: [1] (705) 434 9850; Website: www.torana.dhamma.org Email: info@torana.dhamma.org

Dhamma Vaddhana, Southern California Vipassana Center, P.O. Box 486, Joshua Tree, CA 92252, USA. Tel: [1] (760) 362-4615;; Website: www.vaddhana.dhamma.org Email: info@vaddhana.dhamma.org

Dhamma Patāpa, Southeast Vipassana Trust, Jessup, Georgia, South East USA Website: www.patapa.dhamma.org

Dhamma Modana, Canada Tel: [1] (250) 483-7522; Website: www.modana.dhamma.org Email: info@modana.dhamma.org

Dhamma Karunā, Alberta Vipassana Foundation Tel: [1](403) 283-1889 Fax: [1](403) 206-7453 Email: registration@ab.ca.dhamma.org

Latin America,

Dhamma Santi, Centro de Meditação Vipassana, Miguel Pereira, Brazil Tel: [55] (24) 2468 1188. Website: www.santi.dhamma.org Email: info@santi.dhamma.org

Dhamma Makaranda, Centro de Meditación Vipassana, Valle de Bravo, Mexico Tel: [52] (726) 1-032017 Registration and information: Vipassana Mexico, P. O. Box 202, 62520 Tepoztlan, Morelos Tel/Fax: [52] (739) 395-2677; Website: www.makaranda.dhamma.org Email: info@makaranda.dhamma.org

Dhamma Pasanna, Melipilla, Chile Email: info@pasanna.dhamma.org

Dhamma Sukhadā, Buenos Aires, Argentina, **Contact:** Vipassana Argentina, Tel: [54] (11) 6385-0261; Email: info@ar.dhamma.org

Dhamma Veṇuvana, Centro de Meditación Vipassana, 90 minutes from Caracas, Sector Los Naranjos de Tasajera, Cerca de La Victoria, Estado Aragua, Venezuela. (See map on the website) Tel: [58] (212) 414-5678 For information and registration: Calle La Iglesia con Av. Francisco Solano, Torre Centro Solano Plaza, Of. 7D, Sabana Grande, Caracas, Venezuela. Phone: [58](212) 716-5988, Fax: 762-7235 Website: www.venuvana.dhamma.org Email: info@venuvana.dhamma.org

Dhamma Suriya, Centro de Meditación Vipassana, Cieneguilla, Lima, Perú Email: info@suriya.dhamma.org

South Africa

Dhamma Patākā, (Rustig) Brandwacht, Worcester, 6850, P. O. Box 1771, Worcester 6849, South Africa Tel: [27] (23) 347 5446; **Contact:** Ms. Shanti Mather, Tel/Fax: [27] (028) 423 3449; Website: www.pataka.dhamma.org Email: info@pataka.dhamma.org

Russia

Dhamma Dullabha: Avsyunino Village, Dhamma Dullabha (formerly camp "Druzba") 142 645 Russian Federation, Phones +7-968-894-23-92, +7-901-543-16-27



ISBN 978-81-7414-232-0

VRI - H18